



एम.ए.एच.आई. -01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम

(इतिहास)

एम.ए.एच.आई. - 01 - विश्व इतिहास
(मध्यकालीन समाज एवं क्रांति का युग) - 4

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम
(इतिहास)

खण्ड-4

इकाई संख्या	पृष्ठ संख्या
इकाई 14 उद्योगीकरण के बाद	5-19
इकाई 15 फ्रांस की क्रान्ति-राज्य का स्वरूप एवं बुद्धिजीवी वर्ग और क्रांति	20-33
इकाई 16 फ्रांस की क्रान्ति का प्रभाव	34-52
इकाई 17 नेपोलियन का युग	53-70

पाठ्यक्रम विकास समिति

प्रो. बी.एस. शर्मा, कुलपति (अध्यक्ष)

प्रो. रविन्द्र कुमार

निदेशक, नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं
पुस्तकालय, नई दिल्ली

प्रो. एस.पी. गुप्ता

इतिहास विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम
विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)

प्रो. के.एस. गुप्ता

इतिहास विभाग, मोहन लाल सुखाड़िया
विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

डा. कमलेश शर्मा

इतिहास विभाग, कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. बी.आर. ग़ोवर

पूर्व निदेशक, भारतीय इतिहास
अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रो. जे.पी. मिश्रा

पूर्व इतिहास विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दू
विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

डा. बृजकिशोर शर्मा

विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग कोटा
खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

डा. याक़ूब अली खान

इतिहास विभाग कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण दल

डा. रतनेश्वर मिश्र

इतिहास विभाग, एल.एन.एम.
विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

डा. याक़ूब अली खान

इतिहास विभाग कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

डा. एस.के. मनोत

इतिहास विभाग राजकीय इंगर
महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)

डा. मकसूद अहमद खान

इतिहास विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम
विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)

पाठ्यक्रम प्रभारी एवं सम्पादक

डा. बृजकिशोर शर्मा

विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो.(डॉ.)बी.के. शर्मा
निदेशक(अकादमिक)
संकाय विभाग

योगेन्द्र गोयल
प्रभारी अधिकारी
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल

सहायक उत्पादन अधिकारी,

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन - Oct 2012 MAHI-01/ISBN No.-13/978-81-8496-260-4

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में 'मिमिओग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इकाई-14

उद्योगीकरण के बाद

इकाई की रूपरेखा

- 14.0 उद्देश्य
- 14.1 प्रस्तावना
- 14.2 औद्योगिक पूँजीवाद
- 14.3 कारखाना-पद्धति
- 14.4 आर्थिक असन्तुलन
- 14.5 नगरों का विकास
- 14.6 जनसंख्या में वृद्धि
- 14.7 रहन-सहन के स्तर में सुधार
- 14.8 आर्थिक साम्राज्यवाद
- 14.9 मजदूरों के लिए राजनीतिक अधिकार
- 14.10 उद्योगीकरण के बाद वैचारिक प्रतिक्रियाएं
 - 14.10.1 अहस्तक्षेप की नीति
 - 14.10.2 सरकारी नियमन तथा सामाजिक विधान
 - 14.10.3 यूटोपियाई समाजवाद
 - 14.10.4 कार्ल मार्क्स
- 14.11 भौतिकवाद का विकास
 - 14.11.1 प्रकृति विज्ञान का विकास
 - 14.11.2 साहित्य और कला पर प्रभाव
- 14.12 सारांश
- 14.13 अभ्यासार्थ प्रश्न
- 14.14 प्रासंगिक पठनीय ग्रंथ

14.0 उद्देश्य

- इस इकाई में हमारा उद्देश्य यह जानना होगा कि उद्योगीकरण के बाद
- किस प्रकार औद्योगिक पूँजीवाद का विकास हुआ जिसमें मालिक और कर्मचारियों के सम्बन्ध क्रमशः कम होते गए,
 - कारखाना पद्धति का विकास होने पर विनिर्माण किस प्रकार दुरुह प्रक्रिया बन गया और मालिक से प्रबंधक अधिक महत्वपूर्ण होने लगे,
 - कैसे सारी दुनिया में एक आर्थिक असन्तुलन पैदा हुआ और जब-तब आर्थिक मन्दी और तेजी के दौर आने लगे,

- किस प्रकार नगरों का विकास हुआ तथा नगर-योजनाओं की आवश्यकता पड़ी,
- जनसंख्या में वृद्धि के परिणामस्वरूप किस प्रकार नई समस्याएं उत्पन्न हुईं
- लोगों के रहन-सहन में पहले की तुलना में किस तरह के परिवर्तन आए,
- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक प्रगति के कारण कैसे साम्राज्यवाद का विस्तार हुआ,
- श्रमिकों की स्थिति में किस प्रकार सुधार हुआ और कैसे संगठित होकर वे अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ने लगे,
- उद्योगीकरण से उत्पन्न पूंजीवाद के प्रति बुद्धिवादियों ने, विशेषकर समाजवादियों ने क्या रुख अपनाया, और
- मानव जीवन को अधिक खुशहाल बनाने में विज्ञान, साहित्य, कला आदि प्रत्येक क्षेत्र में भौतिकवाद के आविर्भाव से किस तरह नए कार्य किए जाने लगे ।

14.1 प्रस्तावना

उद्योगीकरण औद्योगिक क्रान्ति का परिणाम था । यह हम जानते हैं कि औद्योगिक क्रान्ति क्या थी और इसमें क्या हुआ । हमें ज्ञात है कि इसकी दो प्रावस्थाएँ थीं- पहली 1870 से पूर्व की और दूसरी उसके बाद की ।

लगभग 1750 से 1870 के बीच हुई औद्योगिक क्रान्ति ने विश्व की काया पलट कर दी । भौतिक प्रगति की गति अत्यधिक तीव्र हो गई । शक्ति चालित मशीनों के आविर्भाव से शारीरिक श्रम गौण पड़ने लगा । कारखाना पद्धति ने घरेलू उत्पादन पद्धति को महत्वहीन सा कर दिया । कारखानों में विनिर्माण में वाष्पशक्ति, लोहा, कोयला और इस्पात का प्रचुर उपयोग होने लगा । परिवहन के क्षेत्र में मैकेडमाइज्ड सड़कों, स्वेज नहर सहित कितनी ही छोटी-बड़ी नहरों, रेलगाड़ियों, मोटरगाड़ियों तथा विमानों ने दूरियाँ कम कर दीं । संचार के क्षेत्र में क्रान्ति हुई । तार, बेलतार, दूरभाष, रेडियो टेलीविजन तथा छापेखाने के आविष्कारों ने लोगों को एक दूसरे के निकट ला दिया । 1870 के बाद इन परिवर्तनों की गति और तेज हुई । मशीनें पहले की तुलना में जटिलतर होती गईं । उन्हें चलाने के लिए वाष्प की जगह विद्युत, तेल तथा परमाणु-ऊर्जा का भी उपयोग होने लगा । मशीनें स्वचालित भी होने लगीं । श्रमिकों तथा शिल्पियों की भूमिका घटती गई । व्यवसाय तथा कारखानों का संचालन मालिकों द्वारा कम, विशेषज्ञ-प्रबन्धकों द्वारा अधिक होने लगा । मशीनीकरण ने कृषि को भी प्रभावित किया जो अब व्यवसाय बन गई । सोलहवीं शताब्दी में जो वाणिज्य क्रान्ति हुई थी वह औद्योगिक क्रान्ति द्वारा लाए गए इन परिवर्तनों से और विस्तृत हुई । इस सबका आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों पर क्रान्तिकारी और व्यापक प्रभाव पड़ा । उद्योगीकरण के बाद एक बिल्कुल ही नई दुनिया का सृजन हुआ । इस इकाई में हम इस नई दुनिया की विशेषताओं की विवेचना करेंगे । सर्वप्रथम हम देखेंगे कि आर्थिक जीवन और संगठन अब कैसा बना ।

14.2 औद्योगिक पूंजीवाद

उद्योगीकरण के साथ पूंजीवाद बढ़ा । इसकी कतिपय स्पष्ट विशेषताएँ थीं । इसके अन्तर्गत उद्यमशील व्यवसायियों को पूंजी बढ़ाने के अनेक नये अवसर मिले । वस्तुतः पूंजी का

इस तरह का विस्तार सोलहवीं शताब्दी की वाणिज्य क्रांति से ही होने लग गया था । अब बहुत से व्यवसायियों ने अपनी समस्त जमा पूंजी लगाकर मशीनें, कच्चा माल तथा श्रम खरीदना शुरू किया । उनमें से अनेक ने तो ऐसी खरीदारी के लिए बैंकों से ऋण भी लिये, ताकि वे अपना उद्योग बिठा सकें । कालान्तर में इन उद्योगों से न केवल उनका धन बढ़ा, बल्कि उनके प्रभाव में भी बहुत वृद्धि हुई । वे " उद्योग के मुखिया" कहलाने लगे । संयुक्त राज्य अमेरिका में इस्पात-उद्योग के ऐंड्रयू कार्नेगी और तेल-उद्योग के जॉन डी रॉकफेलर इसी प्रकार के उद्योग-मुखिया थे । ये उद्योग मुखिया सामान्यतः न केवल अपने कारखानों के स्वयं मालिक होते थे, अपितु उनका सारा प्रबंध भी स्वयं ही करते थे । आज भी ऐसे उद्योगों के ये मुखिया निरन्तर अपने प्रभाव में विस्तार कर पाने में समर्थ हुए और वे अपने अर्जित लाभ को नित नए उद्योगों में लगाकर उद्योगीकरण की प्रवृत्ति को और गति देने में सफल थे । वे अत्यन्त लगन और निष्ठा से अच्छे से अच्छा माल बनाने की चेष्टा करते थे ताकि बाजार पर उनकी पकड़ बनी रहे तथा उनकी ख्याति बढ़ती रहे । वे सतर्कतापूर्वक नए बाजारों की तलाश भी करते रहते थे जहाँ उनके उद्योगों में तैयार माल सरलता से और अच्छे दामों पर बिक सकें । उन्हें अपने प्रतिद्विन्द्वियों से भी सावधान रहना होता था, क्योंकि वे तिकड़म से उन्हें दिवालिया बना दे सकते थे । यही कारण है कि अपने उद्योग का सादर नियंत्रण वे अपने हाथों में रखते थे । इस अर्थ में वे उन व्यवसायियों से भिन्न थे जो मूलतः मध्ययुगीन श्रेणी (गिल्ड) पद्धति के पटु कारीगर थे तथा अपने उद्योगों में कार्यरत अन्य कारीगरों से मित्र-भाव रखते थे । इस पूरी प्रक्रिया को ही "औद्योगिक पूंजीवाद" कहा जाता है । स्पष्टतः इस व्यवस्था के अन्तर्गत मालिक और कर्मचारियों के पारस्परिक सम्बन्धों में क्रमशः कमी होती गई ।

"औद्योगिक पूंजीवाद" के विकास से एक अन्य बात यह हुई कि एक ओर बड़े छोटे व्यवसायियों के बीच एवं दूसरी ओर शारीरिक श्रम करने वाले तथा सफेदपोश कर्मचारियों के बीच भी वर्ग-विभेद बढ़ने लगा । वैसे समान स्वार्थ उपस्थित होने पर उनमें विभेद समाप्त भी हो जाते थे । उदाहरण के लिए आर्थिक एकाधिकार से मिलने वाले लाभ के मामले में व्यवसायियों में अन्तर होता था, किन्तु सरकार द्वारा कर की दर ऊँची किए जाने पर दोनों समान भाव से विरोध करते थे । उसी तरह मन्दी अथवा बेकारी जैसी समस्याओं के सन्दर्भ में सभी प्रकार के श्रमिक एक होते थे, अन्यथा सफेदपोश श्रमिक मेहनतकश की अपेक्षा अपने को ऊँचा समझते थे।

14.3 कारखाना-पद्धति

उद्योगीकरण के विस्तार के साथ ही कारखाना-पद्धति का भी विकास हुआ । इस पद्धति के अन्तर्गत मशीनों का अधिकाधिक प्रयोग कर व्यवसायियों ने बड़े पैमाने पर उत्पादन करने के लिए अपने कारखाने खड़े किए । इतना ही नहीं उत्पादन और अधिक बढ़े इस उद्देश्य से उन्होंने अपने बहुत से कारखानों को मिलाकर एक समूह अथवा औद्योगिक-संश्लिष्ट बना लिया । अब इनके प्रयोगशाला होते थे जहाँ वैज्ञानिक उत्पादन अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए नई और अच्छी विधियों के आविष्कार में संलग्न रहते थे । वैज्ञानिकों तथा विशेषज्ञों की आवश्यकता

इसलिए भी पड़ी कि विनिर्माण-तकनीक के क्रमशः दुरुह होते जाने से उनमें सतत् सुधार और-समंजन का कार्य वे ही कर सकते थे । इसी से उद्योगों और उनमें लगे मशीनों को निरन्तर क्रियाशील रखा जा सकता था । इस तरह जो नई औद्योगिक सभ्यता विकसित हुई उसमें पेशे के रूप में अभियंत्रण का महत्व बहुत हो गया । नित नए आविष्कारों द्वारा प्रौद्योगिकी को समृद्ध बनाने के लिए वैज्ञानिकों के महत्व में भी वृद्धि हुई ।

न केवल प्रौद्योगिकी पक्ष, बल्कि वाणिज्य पक्ष भी इसी पद्धति के अन्तर्गत अधिकाधिक वैज्ञानिक होता गया । अब माल की गुणवत्ता, बाजार का रुख तथा ऐसी अन्य बातों के सम्बन्ध में सूचनाएं एकत्र कर उनका विश्लेषण किया जाता था । इस सबका उद्देश्य होता था उत्पादन में, अधिक से अधिक वृद्धि करना तथा उत्पादों की ग्राह्यता को भी बढ़ाना । इस तरह औद्योगिक-संश्लिष्टों के बन जाने से उत्पादन बहुत बड़े पैमाने पर होने लगा और परिणामतः उत्पादों का मूल्य कम रखने पर भी बहुत लाभ प्राप्त कर लेना संभव हुआ । उद्योगीकरण से पहले उद्योग वाणिज्य का अनुगामी था, किन्तु अब उद्योग वाणिज्य के लिए अधिकाधिक विक्रेय माल की आपूर्ति करने लगा, जिससे उसके नए आयाम प्रकट होने लगे ।

कारखाना-पद्धति से कारखानों के प्रबन्धक अपने स्वामियों से भी महत्वपूर्ण होने लगे । हुआ इस तरह कि समुचित संचालन के लिए औद्योगिक संश्लिष्टों को नियमों के रूप में संगठित किया जाने लगा । इन निगमों ने अपना और विस्तार करने के लिए अपनी पूँजी की प्रतिभूतियाँ (शेयर) बेचनी शुरू कीं । अधिक बड़ी धन राशि पाने के लिए इन्होंने और नई प्रतिभूतियाँ तथा अनुबन्ध पत्र (ब्रॉन्ड) जारी किए । इन्हें खरीदने के लिए एक नए प्रकार के बैंकों की शुरुआत हुई, जिन्हें निवेश-बैंक (इनवेस्टमेंट बैंक) कहते हैं । यूरोप में रॉथसचाइल्ड तथा अमेरिका में जे० पियरपॉट मॉर्गन दो प्रसिद्ध निवेश बैंक हुए । समय बीतने के साथ इन बैंकों ने निगमों का प्रबन्धन अपने हाथों में लेना शुरू किया । अनेक व्यवसायों के संचालन में उद्योगपतियों से भी अधिक बैंकों का प्रभाव बढ़ गया । इसका स्पष्ट कारण यह था कि प्रतिभूति खरीदने वाले अनेक स्वामियों को उस निगम अथवा कारखाने, जिसकी प्रतिभूतियाँ वे खरीदते थे, के विषय में यह तक पता नहीं होता था कि वे कहाँ अवस्थित हैं । इस प्रकार स्वामी और प्रबन्धक के बीच दूरी बढ़ती गई और प्रबन्धक ही स्वामी की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होता गया ।

14.4 आर्थिक असन्तुलन

उद्योगीकरण के बाद प्रायः ही विश्व के समक्ष आर्थिक असन्तुलन की समस्या उपस्थित हो जाया करती है- कभी आर्थिक मन्दी तो कभी आर्थिक तेजी । पहले ऐसा नहीं हुआ करता था, क्योंकि आर्थिक दृष्टि से व्यक्ति और परिवार आत्म निर्भर हुआ करते थे । वे अपनी, आवश्यकता की सभी वस्तुएँ स्वयम् बना लेते थे । उन्हें उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धि अथवा विनिर्मित वस्तुओं की खपत के लिए किसी बाजार की आवश्यकता नहीं पड़ती थी, क्योंकि वे उत्पादन करते ही थे आवश्यकता के अनुसार । अब स्थिति बदल गई । कारखानों और खेतों में कभी-कभी आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने लगा । इन उत्पादों के लिए ग्राहक अथवा उपभोक्ता मिलना मुश्किल हो गया । परिणामस्वरूप कभी-कभी उत्पादों की कीमत, में भारी

कमी हो जाती थी । पूरे विश्व की जनसंख्या को ध्यान में रखकर आवश्यकता से अधिक उत्पादन की बात करना असंगत है, क्योंकि कितना भी उत्पादन हो दुनिया में कहीं न कहीं लोग उसके उपभोग से वंचित रह ही जायेंगे । वस्तुतः उत्पादन का वह अंश जिसका बाजार में खपत न किया जा सके अथवा जिसे बेचकर समुचित लाभ नहीं कमाया जा सके उसे ही आवश्यकता से अधिक उत्पादन कहा गया । जो भी हो, इस तथ्य ने आर्थिक असन्तुलन तो उत्पन्न कर ही दिया।

आर्थिक असन्तुलन इस कारण भी उत्पन्न होने लगा कि उद्योगीकरण के बाद दुनिया में आर्थिक दृष्टि से राष्ट्रों की परस्पर आश्रिता इतनी बढ़ गई है कि एक की घटना का दूसरे पर सीधा प्रभाव पड़ने लगा । एक देश में युद्ध छिड़ने पर अथवा वहाँ के बैंक के दिवालिया होने पर दूसरे देश भी दुष्प्रभावित होते हैं । उद्योगीकरण के बाद के विश्व में समय-समय पर ऐसे आर्थिक असन्तुलन उपस्थित होते ही रहे हैं ।

आर्थिक असन्तुलन के सन्दर्भ में राष्ट्रों की जिस परस्पर आश्रिता का उल्लेख किया गया उसका एक रूप यह भी हुआ कि सारा विश्व एक बाजार बन गया । वस्तुतः आर्थिक निर्भरता के युग का सूत्रपात सोलहवीं शताब्दी की वाणिज्य क्रांति के परिणामस्वरूप ही हो चुका था । उद्योगीकरण के कारण वह और व्यापक हुआ । ब्रिटेन का सूती वस्त्र उद्योग अमेरिका से आयातित कपास पर अत्यधिक अवलम्बित था । न केवल कच्चे माल के लिए बल्कि खाद्यान्नों के लिए भी ब्रिटेन और उस जैसे दूसरे उद्योगीकृत यूरोपीय देशों को दुनिया के अन्य देशों पर निर्भर करना पड़ता था, क्योंकि शहरी उद्योगों में बड़े पैमाने पर निरत हो जाने के कारण इन देशों के लोग खेतों से कम उपज लेने में समर्थ हुए । खाद्यान्न के बदले ये देश कारखानों में विनिर्मित माल का निर्यात करने लगे । इस प्रकार एक बाजार में परिवर्तित विश्व में किसी भी देश में कहीं भी औद्योगिक अव्यवस्था होने से उसका दुष्प्रभाव हजारों किलोमीटर दूर स्थित देशों में परिलक्षित होने लगा ।

14.5 नगरों का विकास

उद्योगीकरण से आर्थिक दृश्यपटल ही नहीं सामाजिक दृश्यपटल भी बदलने लगा । इससे मानव समाज का जो भौतिक रूपान्तरण हुआ उसका एक मुख्य पहलू था नगरों का विकास । ज्यों-ज्यों उद्योगीकरण बढ़ता गया त्यों-त्यों ही नगर भी बसते चले गए । प्राचीन और मध्यकाल में नगर मंडियों, धर्मस्थानों, किलों तथा राजधानियों को केन्द्र बनाकर उन्हीं के चतुर्दिक, विकसित होते थे, किन्तु अब नगरों की स्थापना के केन्द्र कारखाने होते थे । आरंभ में ये नगर बेतरतीब विकसित हुए और उनमें स्वास्थ्य, स्वच्छता, शिक्षा आदि पर कोई ध्यान नहीं दिया गया किन्तु जैसे-जैसे दिन बीतते गए सहकारी गृह निर्माण योजनाओं तथा सरकारी चेष्टाओं के माध्यम से योजनाबद्ध ढंग से नगरों का विकास किया जाने लगा । अधिकांश देशों में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में गंदी बस्तियों की जगह व्यवस्थित नगरों के निर्माण होने लगे । ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, ऑस्ट्रिया, स्वीडन और नीदरलैंड इस क्षेत्र में अगुवा बने । यह परिवर्तन इसलिए हुआ क्योंकि कारखानों के मालिकों ने देखा कि अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों में

रहने वालों की अपेक्षा आरामदेह और स्वच्छ परिस्थितियों में रहने वाले मजदूरों तथा कर्मचारियों का काम कहीं अच्छा होता था ।

14.6 जनसंख्या में वृद्धि

उद्योगीकरण के बाद सामाजिक क्षेत्र में एक बड़ा महत्वपूर्ण परिवर्तन था जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि । 1750 से 1950 के बीच यूरोप में जनसंख्या की वृद्धि के आँकड़े कुछ इस प्रकार थे:-

वर्ष	1750	1800	1850	1900	1950
जनसंख्या (दस लाख में)	140	180	266	401	540

जनसंख्या की यह वृद्धि इसलिए हुई क्योंकि अब जहाँ एक ओर अधिक अन्न उपजाया जाना तथा उन्नत यातायात के कारण अतिरिक्त उपजवाले क्षेत्र से अन्न मंगाकर अधिकाधिक लोगों का भरण-पोषण करना संभव हुआ वहीं दूसरी ओर औषध विज्ञान की उन्नति होने से लोगों के जीने की औसत आयु बढ़ने लगी । जनसंख्या की वृद्धि ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में अधिक हुई । विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्था पर इस वृद्धि का गंभीर प्रभाव पड़ा । खाद्यान्न की बढ़ी मांगों को पूरा करने के लिए ब्रिटेन जैसे देश में कृषि के तरीकों में सुधार हुआ तो रूस जैसे देशों में अधिक क्षेत्रों को खेती के योग्य बनाया जाने लगा । जनसंख्या वृद्धि के साथ उसकी गतिशीलता भी बढ़ी क्योंकि सुन्दरतर जीवनस्तर की तलाश में लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर बसने लगे । इससे कई देशों को आब्रजको को रोकने के लिए तो कड़ियों को उन्हें आकर्षित करने के उपाय करने पड़े । अमेरिका तो एक तरह से आब्रजकों का ही देश है ।

14.7 रहन-सहन के स्तर में सुधार

उद्योगीकरण से जो एक बड़ा परिवर्तन संभव हुआ वह है लोगों के रहन-सहन के स्तर में अभूतपूर्व सुधार । अठारहवीं शताब्दी के लोगों ने उन सुविधाओं की स्वप्न में भी कल्पना न की होगी, जो आज सामान्य जन को भी सुलभ हैं । अमेरिका का आज का एक मजदूर 1800 के धनी कुलीन से भी अच्छे स्तर में रहता है, क्योंकि उसे टेलीफोन, शीतलक, धुलाई मशीन तथा ऐसी ही अनेक उपभोक्ता सुविधाएं उपलब्ध हैं जो पहले किसी के लिए भी नहीं थीं । उद्योगों से धनी बने नए मध्यमवर्ग के लोगों को पहले तो कुलीन वर्ग तिरस्कार की दृष्टि से देखता था, किन्तु उनकी बढ़ती सम्पन्नता और उनके मुकाबले अपनी बढ़ती गरीबी के कारण वे नवधनाद्य उद्योगपतियों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने को बाध्य हुए ।

इस सबसे पारिवारिक जीवन में बहुत बदलाव आया । उद्योगीकरण द्वारा सुलभ बनाई सुविधाओं के कारण अब लोग, यहाँ तक कि नारियाँ भी, घर की चार-दीवारी में बन्द नहीं रहे । वे काम के लिए भी और अवकाश का समय बिताने के लिए भी घरों से बाहर निकलने लगे ।

मनोरंजन के तरीकों में हुए परिवर्तनों से इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है । पहले शतरंज और ताश जैसे घरेलू खेल ही आम थे । पार्टियों, संगीत, नृत्य तथा नाटक आदि का आयोजन मात्र कुछ लोगों के लिए ही सुलभ था । उन्नीसवीं शताब्दी से नाटक, सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन आदि जनसामान्य के लिए सुलभ हो गए । बेसबॉल, फुटबॉल, हॉकी, टेनिस और बास्केटबॉल जैसे खेलों का बड़े पैमाने पर चलन हो गया । मनोरंजन का वाणिज्यीकरण

हुआ जिससे एक बुराई भी आई और वह यह कि बहुसंख्य लोग उसमें भाग लेने के बजाय मात्र दर्शक बनकर रह गए ।

उद्योगीकरण के परिणामस्वरूप रहन-सहन के स्तर में एक नया परिवर्तन यह आया कि भोजन, वस्त्र, मकान, मनोरंजन और अन्य कई क्षेत्रों में एक विलक्षण मानकीकरण अथवा एकरूपता का विकास हुआ । डिब्बाबन्द खाद्य पदार्थ, वेष्टित डबलरोटी, सूट, शर्ट, स्वीकृत नक्शों के आधार पर बने मकान, मकानों की सजावट आदि सारी दुनिया में लगभग एकरूप होने लग गए । यह सब सुन्दरतर यातायात एवं संचार व्यवस्था की स्थापना से संभव हुआ ।

14.8 आर्थिक साम्राज्यवाद

उद्योगीकरण के बाद राजनीति का स्वरूप बदल गया । सबसे पहले यदि राष्ट्रों के सम्बन्धों में आए बदलाव को देखें तो स्पष्ट होगा कि बदली आर्थिक परिस्थितियों ने आर्थिक साम्राज्यवाद को जन्म दिया । प्राचीन घरेलू उत्पादन पद्धति की तुलना में औद्योगिक उत्पादन के परिणामस्वरूप विनिर्माण की मात्रा बहुत बढ़ गई । इन्हें बेचने के लिए बाजारों की आवश्यकता हुई तथा कारखानों में विनिर्माण की प्रक्रिया निरन्तर बनाए रखने के लिए कच्चे माल की भी आवश्यकता हुई । ये दोनों बातें घरेलू मंडी से पूरी नहीं की जा सकती थीं, अतः नई मंडियों की तलाश शुरू हुई । इसी का परिणाम था कि उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में समुद्र पार दुनिया के अविकसित भागों में यूरोपीय देशों ने अपने "प्रभाव क्षेत्र" स्थापित किए । इसके साथ ही औपनिवेशिक साम्राज्यों की स्थापना होने लग गई ।

यह जानना बड़ा रोचक है कि विभिन्न देशों की सैनिक क्षमता का विकास उसके उद्योगीकरण के अनुपात में ही हुआ । इंग्लैण्ड, फ्रांस और जर्मनी का आधुनिक काल में यूरोप ही नहीं सारी दुनिया पर अधिक वर्चस्व उनके अधिक उद्योगीकरण के कारण ही संभव हुआ । रूस तथा कई दूसरे यूरोपीय देशों का इस सन्दर्भ में पिछड़ जाना उनके अपेक्षाकृत कम उद्योगीकरण के कारण हुआ । इसी तरह पूर्व की दुनिया में अपने उद्योगीकरण के चलते ही जापान अग्रणी सैनिकवादी देश बना । 1861-65 के अमेरिकी गृह युद्ध में उत्तरी संयुक्त राज्य अमेरिका दक्षिण को इसलिए परास्त कर सका क्योंकि जहाँ उत्तर में विकसित उद्योग थे वहीं दक्षिण अभी उद्योगीकरण की प्रारंभिक स्थिति में ही था ।

14.9 मजदूरों के लिए राजनीतिक अधिकार

उद्योगीकरण के बाद सर्वाधिक परिवर्तन विभिन्न प्रकार के श्रमिकों की स्थिति में हुई । लम्बे मानव इतिहास में लोग भारी संख्या में दास, कृषक-दास अथवा बेगारी रहे । प्लेटों और अरस्तु के जमाने से ही इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता रहा था । अब इनकी स्थिति बदली है । श्रमिक स्वतंत्र हुए हैं तथा श्रम को गौरव का स्थान मिला है । दास प्रथा लगभग समाप्त हो गई । उद्योगीकरण से पहले भी दास प्रथा को समाप्त करने की चेष्टाएं की गईं, पर बाद में इस दिशा में किए गए प्रयास अधिक सफल हुए । अब श्रमिक अपनी इच्छा से किसी मालिक के लिए किसी प्रकार का काम और स्वयम् अपने द्वारा निर्धारित प्रांतों पर करने के लिए स्वतंत्र हैं ।

यह सब उद्योगीकरण के बाद मजदूरों में उत्पन्न चेतना से संभव हुआ। पहले-पहले ब्रिटेन में अपनी समस्याओं के समाधान के लिए मजदूरों ने चेष्टाएं शुरू की। 1825 में कुछ उदारदलीय नेताओं की मदद से वहां के मजदूरों को अपने संघ बनाने की अनुमति मिली। 1875 में फ्रांस ने मजदूर संघों को कानूनी मान्यता दी। संयुक्त राज्य अमेरिका में 1881 में शक्तिशाली अमेरिकी मजदूर फेडरेशन की स्थापना हुई। संघों में संगठित हो जाने पर मजदूरों को सामूहिक सौदेबाजी का सामर्थ्य प्राप्त हुआ। ब्रिटेन में मजदूरों का पहला बड़ा आन्दोलन, चार्टिस्ट आन्दोलन, 1848 में असफलता के साथ समाप्त हुआ। वहां के मजदूरों को मतदान का अधिकार 1867 के सुधार अधिनियम से ही मिल पाया। धीरे-धीरे ब्रिटेन में मजदूर-संघों की शक्ति इतनी बढ़ी कि 1870 के बाद उन्होंने अपना एक राजनीतिक दल ही संगठित कर लिया। उद्योगीकरण के प्रभावों से अपेक्षाकृत वंचित कृषि प्रधान देशों में मजदूर-संघों का ऐसा विकास संभव नहीं हो सका।

मजदूर-संघों की बढ़ती सफलता ने व्यवसायी अथवा पूंजीपति को भी अपने हितों की रक्षा के लिए संगठित होने को प्रेरित किया। मजदूर हड़ताल करते तो व्यवसायी तालाबन्दी। इससे दोनों को ही क्षति होती थी, अतः वे परस्पर सौदेबाजी द्वारा अपनी समस्याएं सुलझाने की चेष्टा करते थे। यह भी मजदूरों की उपलब्धि थी। वस्तुतः ज्यों-ज्यों लोकतंत्र शक्तिशाली होता जा रहा है त्यों-त्यों बड़ी संख्या के बल पर संगठित मजदूर अधिकाधिक राजनीतिक तथा दूसरे अधिकार प्राप्त करने में समर्थ होता जा रहा है।

14.10 उद्योगीकरण के बाद वैचारिक प्रतिक्रियाएं

उद्योगीकरण से उपजे पूंजीवाद की हम चर्चा कर चुके हैं। इस पूंजीवाद की एक बड़ी विशेषता यह थी कि शुरू से ही इसके प्रति बुद्धिवादियों का रुख भिन्न-भिन्न रहा। एक पक्ष सरकारी हस्तक्षेप की आलोचना करता था तो दूसरा सरकार द्वारा नियमन की वकालत। प्रथम पक्ष ऐडम स्मिथ के सिद्धान्त पर आधारित था। इसे अनुदार कहा गया तो दूसरे पक्ष को उदार। एक तीसरा पक्ष भी था जो पूंजीवाद को बिल्कुल समाप्त कर समाजवादी आर्थिक प्रणाली- की स्थापना चाहता था। ये लोग आमूल-परिवर्तनवादी (रैडिकल) कहलाए। इन विभिन्न आर्थिक विचार-प्रणालियों का संघर्ष उद्योगीकरण के बाद के युग की विशिष्टता रही है।

14.10.1 अहस्तक्षेप की नीति:

अहस्तक्षेप की नीति के समर्थक सरकार द्वारा नियमन अथवा नियंत्रण को बुरा मानते थे। उनके अनुसार मांग और आपूर्ति के प्राकृतिक नियम चलते रहने से उत्पादों की गुणवत्ता में वृद्धि तथा उनकी कीमतों में कमी सुनिश्चित है। इससे व्यवसायियों को उद्योगों का विस्तार करने तथा नए उद्योग शुरू करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा। ये विचार सर्वप्रथम "फिजियोकैट्स" नाम से ज्ञात फ्रांसीसी विचारक फांस्वा क्वेज्ने तथा उसके अनुगामियों ने अभिव्यक्त किए। इसी तरह का विचार लेकर बाद में स्कॉटलैंड वासी ऐडम स्मिथ ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "वेल्थ ऑफ नेशन्स" लिखी। इसका उन्नीसवीं शताब्दी के आर्थिक चिन्तन पर जबरदस्त प्रभाव पड़ा। ऐडम स्मिथ के विचार में सरकार का कार्य सब जगह उपस्थित

पुलिसवाले की तरह लोगों की सम्पत्ति की रक्षा करना तथा संविदाओं का अनुपालन कराना भर था । उसका काम व्यक्तियों द्वारा अपने हितों को बढ़ाने की चेष्टा के मार्ग में रोड़े अटकाना बिल्कुल नहीं था । नवोदित पूंजीवादी वर्ग में यह आर्थिक दर्शन अत्यधिक लोकप्रिय हुआ । इसे-हम उद्योगीकरण द्वारा प्रस्तुत सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों की व्याख्या के लिए राजनीतिक अर्थव्यवस्था के विज्ञान की शुरुआत भी कह सकते हैं ।

14.10.2 सरकारी नियमन तथा सामाजिक विधान:

उद्योगों के विस्तार के साथ-साथ सरकारी नियमन बढ़ता ही गया । ऐसा होना ही था, क्योंकि मजदूर संगठित होने लगे तथा काम की अच्छी दशा स्थापित करने के लिए आन्दोलन करने लगे । सरकारें हस्तक्षेप करने के लिए बाध्य हुई । सरकारों को इसलिए भी हस्तक्षेप करना पड़ता था, क्योंकि कारखाने आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने लगे जिससे वस्तुओं की कीमतें गिरने लगीं और मन्दियों के दौर आने लगे । सरकारी हस्तक्षेप का परिणाम हुआ कारखाना कानूनों का निर्माण । उन दिनों मजदूरों की हालत सुधारने के लिए इस तरह के जो कानून बने वे आज के हिसाब से अमानवीय ही थे । उदाहरण के लिए 1802 में ब्रिटेन में बना वह कानून जिसके अनुसार नौ साल से कम आयु वाले बच्चों से एक दिन में बारह घंटे से अधिक काम नहीं लिया जा सकता था 1842 के बाद ब्रिटिश खानों में स्त्रियों और बच्चों का काम करना प्रतिबंधित कर दिया गया । 1860 तक अधिकांश ब्रिटिश कारखानों में मजदूरों के कार्य की सीमा एक दिन में दस घंटे कर दी गई । 1880 के दशक में जर्मनी में चांसलर वॉन बिस्मार्क ने दुर्घटना बीमा, बाल श्रम कानून, अधिकतम घंटों का कानून बनाए । इन सब कानूनों से मजदूरों की स्थिति में सुधार हुआ, किन्तु कुछ लोगों की नजर इन कानूनों के बुरे प्रभावों पर भी पड़ी । अब मजदूरों में आलस्य, नशेबाजी और अनैतिकता बड़ी, क्योंकि उनके पास इस सबके लिए अतिरिक्त धन भी था और समय भी । अहस्तक्षेप की नीति के समर्थकों ने इन कानूनों को मजदूरों द्वारा इच्छानुसार काम करने के अधिकार का अतिक्रमण भी माना । जो भी हो, मजदूरों के हित में कानून बनते रहे और बीमारी, दुर्घटना, वृद्धावस्था आदि की स्थिति में मजदूरों की आय सुनिश्चित करने तथा प्रबंधन की ओर से उन्हें सहायता उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई । इन कानूनों को "सामाजिक विधान" कहा जाता है ।

सामाजिक विधि-निर्माण केवल मजदूरों तक सीमित नहीं रहा । बड़े व्यवसायियों के विरुद्ध छोटे व्यवसायियों को प्रतियोगिता में बनाए रखने, किसानों के हित में कृषि पैदावार की कीमतों को एक सीमा से नीचे न गिरने देने तथा उपभोक्ताओं को शुद्ध वस्तुएँ उपलब्ध कराने के लिए भी कानून बनाए गए ।

सरकारी नियमन घरेलू उद्योगों तक ही सीमित नहीं था । अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को नियमित करना भी जरूरी होने लगा । ब्रिटिश औद्योगिक उत्पादों की प्रतियोगिता से अपने उत्पादों को बचाने के लिए अनेक देशों ने उन्नीसवीं शताब्दी में भारी तटकर लगाकर बाहर से आने वाले उत्पादों की कीमतें बढ़ा दीं । स्वयम् ब्रिटेन में बाहरी देशों के कृषि-उत्पादों की

प्रतियोगिता से अपने कृषि-उत्पादों को बचाने के लिए अन्न कानून (कॉर्न लॉ) बनाया गया । इससे भूस्वामियों को प्रसन्नता हुई तो उद्योगों में लगे लोगों को नाराजगी । उन्हीं के विरोध के कारण 1846 में इन कानूनों को रद्द करना पड़ा । जो भी हो, उद्योगीकरण के परिणामस्वरूप संरक्षणात्मक तटकर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अनिवार्य अंग बन गया ।

सरकारी नियमन तथा सामाजिक विधि-निर्माण के बावजूद उद्योगीकरण के बाद उद्योगपति तथा प्रबंधन से जुड़े लोग तो धनी होते गए, किन्तु बहुसंख्य मजदूर गरीब ही रहे । श्रेण्य अर्थशास्त्रियों के नाम से ज्ञात थॉमस माल्थस और डेविड रिकार्डो ने अपने सिद्धान्तों द्वारा गरीब की स्थिति को अपरिवर्तनीय बताया । माल्थस के अनुसार गरीब की आर्थिक स्थिति में किसी प्रकार के सुधार का प्रयास बेकार था क्योंकि जनसंख्या की प्रवृत्ति जीवन-निर्वाह के लिए उपलब्ध साधनों के अनुपात में बढ़ने की होती है । रिकार्डो भी गरीब की स्थिति में सुधार की संभावना नहीं देखता था । उसके "मजदूरी के लौह विधान" के अनुसार यह सामान्य प्रवृत्ति है कि मजदूरी की राशि उतनी ही रखी जाए जितनी मजदूर के जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त हो ।

14.10.3 यूटोपिआई समाजवाद:

गरीबों की स्थिति में सुधार के लिए कुछ लोगों ने उत्पादन के साधनों पर सरकारी स्वामित्व की मांग की । ऐसे लोगों को समाजवादी कहा गया और उनके द्वारा अनुशंसित व्यवस्था को समाजवाद । समाजवादी भी कई प्रकार के थे । सर्वप्रथम वे थे जो सर थॉमस मोर की पुस्तक "यूटोपिया" से प्रेरणा ग्रहण कर एक ऐसे आदर्श समाज का निर्माण करना चाहते थे जिसमें सभी कामगार पारस्परिक सहयोग से अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुओं का उत्पादन कर सकें । इसमें वे पूंजीपतियों का भी सहयोग ले सकते थे । इसे यूटोपियाई समाजवाद कहा गया । इसके अन्तर्गत फ्रांस के चार्ल्स फरया और साँ सीमोन ने प्रस्ताव रखा कि सरकार सम्पत्ति का प्रबंध संभाले । इस सिलसिले में व्यावहारिक धरातल पर रॉबर्ट ओवन का काम विलक्षण था । उसने स्कॉटलैंड के न्यू लेनार्क नामक नगर में एक आदर्श बस्ती का निर्माण किया । वहाँ कारखानों पर मालिकाना अधिकार तथा कारखाने के मुनाफे में हिस्सा मजदूर और प्रबंधक में बंटे थे । उस नगर में अपराध का नामोनिशान नहीं था । ओवन ने ऐसा ही प्रयोग अमेरिका स्थित इन्ड्रियाना राज्य के न्यू हार्मनी नगर में भी करने की कोशिश की, परन्तु वहाँ उसे सफलता नहीं मिली । फिर भी, ओवन के 'लैनार्क' प्रयोगों को आधुनिक सहकारी संस्थाओं का प्रेरणा-स्रोत कहा जा सकता है । पहली सहकारी संस्था 1844 में इंग्लैण्ड के रॉशडेल नामक नगर में लगभग तीस बुनकरों ने मिलकर की थी । इस यूटोपियाई समाजवाद की आलोचना भी की गई । 1848 की फ्रांसीसी क्रांति के नेता लुई ब्ला ने यूटोपियाइयों की आलोचना इसलिए की कि वे पूंजीपतियों से सहयोग की बात करते थे ।

14.10.4 कार्ल मार्क्स:

1848 में ही दो प्रमुख जर्मन समाजवादियों कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंजल्स ने "कम्यूनिस्ट मैनीफेस्टो" नामक एक पुस्तिका प्रकाशित की । इसके द्वारा उन्होंने संसार भर के मजदूरों को संगठित होने और पूंजीवाद को उखाड़ फेंकने की प्रेरणा दी । 1867 में उन्होंने "डास

कैपिटाल" नामक पुस्तक की पहली तीन जिल्दें प्रकाशित कीं । इसके द्वारा इतिहास की आर्थिक व्याख्या प्रस्तुत की गई और कहा गया कि मनुष्य के प्रत्येक कार्य उन अवस्थाओं से निर्धारित होते हैं जिनमें रहकर वह अपनी जीविका अर्जन करता है । प्रत्येक युग में इन अवस्थाओं का निर्धारण धनी लोग ही करते हैं । आलोचकों की दृष्टि में मार्क्स ने राष्ट्रीयता और धर्म जैसे शक्तिशाली प्रभावों को अस्वीकार कर तथा आर्थिक प्रभाव को ही सब कुछ मानकर इतिहास को विकृत कर दिया । इस पुस्तक में मानव इतिहास को वर्ग-संघर्षों का इतिहास बताया गया । प्राचीन रोम में प्लैबियनों और पैट्रिशियनों, मध्यकालीन यूरोप में कृषक-दासों और भूस्वामियों तथा आधुनिक काल में पूंजीवादी और मजदूर वर्गों के संघर्ष इसके उदाहरण हैं । पुस्तक में मजदूरों का संगठित होकर क्रान्ति करने के लिए आह्वान किया गया है । आलोचक वर्ग-संघर्ष की इस अवधारणा को भी स्वीकार नहीं करते हैं ।

1864 में मार्क्स ने पूंजीवाद के विरुद्ध दुनिया के मजदूरों को "अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ" में बांधने का प्रयास किया । यह संगठन प्रथम इन्टरनेशनल कहलाया । 1876 में इसके भंग होने पर द्वितीय इन्टरनेशनल और फिर तृतीय इन्टरनेशनल अथवा "कौमिन्टर्न" और "कौमिन्फार्म" बने । लगभग प्रत्येक देश में मार्क्स के विचारों के आधार पर राजनीतिक पार्टिया बनीं । मार्क्स के अनुयायियों में कतिपय नरमदलीय और दक्षिणपंथी हैं तो दूसरे आमूल-परिवर्तनवादी अथवा वामपंथी । प्रथम चुनावों में जीतकर सरकार पर अधिकार कर समाजवाद लाने में विश्वास करें हैं तो दूसरे हिंसात्मक मार्गों से पूंजीवादी सरकारों को उखाड़ फेंकने में । दक्षिण-पंथी वामपंथियों की आलोचना करते हैं कि वे हिंसा का प्रयोग करते हैं, मौलिक अधिकारों का दमन करते हैं तथा एकदलीय अधिनायकतंत्र की स्थापना करते हैं । जैसा कि भूतपूर्व सोवियत रूस में हुआ । आमूल परिवर्तनवादियों में अराजकतावादी (अनार्किस्ट) और संधाधिपत्यवादी (सिंडिकैलिस्ट) भी थे । फ्रांसीसी पृथों अराजकतावाद का जन्मदाता था और उसका मानना था कि मनुष्य स्वभावतः अच्छा है और राज्य अथवा धर्म जैसे सभी प्राधिकार बुरे हैं । संधाधिपत्यवादी भी सरकारों को निरर्थक मानते हैं और निकम्मा पूंजीवाद को समाप्त कर मजदूर संघों के माध्यम से कारखानों के प्रबंधन की कल्पना करते हैं । आमूल-परिवर्तनवादियों का प्रभाव कुछ खास नहीं पड़ा ।

14.11 भौतिकवाद का विकास:

उद्योगीकरण ने लोगों को भौतिक सुखों से भर दिया । अब सुखों की उपलब्धि के लिए मध्ययुगीन धार्मिक विधियों में स्वभावतः उसका विश्वास घटने लगा । थॉमस हकसले जैसे चिन्तकों ने अज्ञेयवाद (एनोस्टिजिज्म) के दर्शन का प्रणयन किया । इसका अर्थ था भौतिक तथ्यों से परे वस्तुओं के विषय में कोई कुछ नहीं जानता है और ऐसी किसी वस्तु में किसी को विश्वास करने का कोई अधिकार भी नहीं है जो वह अपनी ज्ञानेन्द्रियों से नहीं जान सकता है यह भौतिकवाद की स्थापना थी । फ्रेडरिक डब्लू० नीत्से का तो कहना था कि "मनुष्य की वास्तविक और गहरी प्रवृत्ति शक्ति के लिए है ।" औद्योगिक क्रांति की असाधारण प्रगति के फलस्वरूप लोग यह सोचने लगे कि मानव सर्वप्रतिभासम्पन्न है और वह कुछ भी करने में

समर्थ है- समाज को बदलने में भी । जिस तरह प्रकृति के कुछ नियम हैं उसी तरह समाज के भी, जिन्हें जानकर मनोनुकूल समाज बनाया जा सकता है । फ्रांसीसी दार्शनिक ऑगस्टी कॉमट ने इसे समाज विज्ञान (सोशियोलॉजी) नाम दिया । इसी तरह कुछ लोग यह सोचने लगे कि मनुष्य अच्छे या बुरे काम दैवी अथवा शैतानी प्रभावों के कारण नहीं, बल्कि अपने परिवेश के कारण करते हैं । इस सोच ने मनोविज्ञान (साइकोलॉजी) को जन्म दिया । विलियम जेम्स अमेरिका में मनोविज्ञान के एक संस्थापक हुए । सिगमंड फ्रायड एक ऑस्ट्रियाई डॉक्टर थे जिसने मनोविश्लेषण की स्थापना की । इस तरह भौतिकवाद ने लोगों को कई तरह से प्रभावित किया । इसकी अभिव्यक्ति मात्र समाजशास्त्र और मनोविज्ञान के क्षेत्रों में ही नहीं अपितु साहित्य और कला साहित्य जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी हुई ।

14.11.1 प्राकृतिक विज्ञान का विकास

उद्योगीकरण के बाद कारखानों, पूंजी और मजदूरों के अच्छे-बुरे पहलुओं के अतिरिक्त पदार्थ जगत् के गुप्त रहस्यों को पता लगाने की भी चेष्टा की गई । अलेक्जेंडर हमबोल्ट, लुई अगासी, सर चार्ल्स लायल आदि प्रमुख आरंभिक वैज्ञानिक थे, परन्तु शायद उन्नीसवीं शताब्दी का सबसे उल्लेखनीय वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन था । उसने अपनी पुस्तकों "प्राकृतिक चयन द्वारा स्पीशीज का उद्गम" तथा "मानव की उत्पत्ति" के माध्यम से विकासवाद तथा "योग्यतम की अतिजीविता" के सिद्धान्तों का निरूपण किया । भौतिकशास्त्र, के क्षेत्र में भी अनेक खोजें की गई । बेंजामिन फ्रेंकलिन, काउण्ट वोल्टा, सर हम्फ्री डेवी, टॉमस एडीसन तथा माइकल फैरेडे के आविष्कारों के परिणामस्वरूप आज बिजली का प्रकाश हमारे अधिकार में है । सैमुअल एफ0बी0 मोर्स ने टेलीग्राफ तथा अलेक्जेंडर ग्राहम बेल ने टेलीफोन का आविष्कार किया । डेवी और फैरेडे ने विसंजकों (बेहोश करने की दवाओं) को खोज निकाला, जिनके कारण मनुष्य शरीर का चीर-फाड़ करना सरल हो गया है । जोसफ लिस्टर तथा लुई पाश्चर की खोजों के परिणामस्वरूप यह ज्ञात हुआ कि बीमारियां अणुजीवों के कारण होती हैं तथा रोगाणुरोधक दवाओं से उनका निवारण किया जा सकता है । धीरे-धीरे चेचक, हैजे तथा अन्य बीमारियों से बचने के टीके खोज लिए गए । विल्हेल्म रून्टजेन ने एक्सरे की खोज की तो मानव-शरीर के भीतरी भागों को देख पाना सम्भव हुआ । मेरी क्यूरी ने रेडियम की खोज की जिसका प्रयोग कैंसर जैसी बीमारी के उपचार में होने लगा । इन खोजों ने मनुष्य को सुख-सुविधाएँ दीं, स्वस्थ बनाया तथा आमतौर से जीवन को अधिक खुशहाल और रोचक बनाया ।

14.11.2 साहित्य और कला पर प्रभाव

दुनिया को बदल देने वाले औद्योगिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक परिवर्तनों का साहित्य और कला पर भी प्रभाव पड़ा । 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में साहित्य और कला में जो भावनाएं अभिव्यक्त हुईं वह "स्वच्छन्दतावाद" (रोमान्टिसिज्म) कहलाया । स्वच्छन्दतावादियों के प्रेरणा के स्रोत अनेक थे । कुछ ने अतीत, विशेषकर मध्यकाल, का चित्रण किया, जैसे:- सर वाल्टर स्कॉट और टेनीसन, जिन्होंने क्रमशः "आइवान

हो" "आइडियल्स ऑफ द किंग" नामक पुस्तकें लिखीं । कुछ ने गरीबों और पददलितों की स्थिति का चित्रण किया तो कुछ ने प्रकृति से प्रेरणा ली । राष्ट्रीयता और देशभक्ति भी इनकी विषय-वस्तु बनी । शेली और वर्ड्सवर्थ प्रकृति के चित्ते थे तो विलियम कौलिन्स देशभक्ति का गायक । रॉबर्ट ब्राउनिंग ने पुनर्जागरण युग के बारे में कविताएं लिखीं और कविता की परम्परागत प्रणाली का विरोध कर अधिक मुक्त छन्दों का प्रयोग किया । जर्मन साहित्यकार जान वुस्फर्गेग वॉन नेटे तथा जॉन शीलर ने क्रमशः "फाउस्ट" और "विलियम टैल" नामक नाट्य-कविताएं लिखीं । स्वच्छन्दतावादी उपन्यासकारों में चार्ल्स डिक्केन्स ने कठोर परिश्रम करने वालों बच्चों तथा इंग्लैण्ड की जेलों में सड़ने वाले कर्जदारों की दुर्गति का चित्रण किया । प्रथम ख्यात महिला उपन्यासकार जार्ज इलियट तथा फ्रांसीसी विक्टर ह्यूगो ने लोगों के दुःख-दैन्य की तस्वीर खींची । "तीन तिलंगे" के लेखक अलेक्जेंडर ड्यूमा ने ऐतिहासिक उपन्यास लिखे । नेपोलियन कालीन युद्धों की प्रतिक्रिया में रूस में अलेक्जेंडर पुश्किन ने राष्ट्रीयता की भावना को अभिव्यक्ति दी तो तुर्गनेव ने लोगों में फैली गरीबी को । धीरे-धीरे स्वच्छन्दतावाद अमेरिका, स्कैन्डिनेविया, नीदरलैंड्स, पोलैंड और स्पेन आदि देशों में भी फैला । स्वच्छन्दतावादियों की विशेषता थी कि वे महज तथ्यों के पुनर्निरूपण के बजाय कल्पनाशक्ति के सहारे भावनाओं की अभिव्यक्ति में अधिक दिलचस्पी लेते थे । कालान्तर में स्वच्छन्दतावाद जारी रहा, किन्तु साहित्य और कला में जीवन की विदूषताओं को उकेरनेवाली यथार्थवादी कृतियाँ भी लिखी जाने लगीं । अनातोले फ्रांस का "दिरिवोल्ट ऑफ दू एंजिल्स", टॉमस हार्डी का "मेयर ऑफ कास्टरब्रिज", हेनरिक इब्सन का "ए डौल्सहाउस" आदि ऐसी ही रचनाएं थीं । बर्नार्ड शॉ, एच० जी. वेल्स तथा लियोतालस्ताय भी इसी श्रेणी के लेखक थे, यद्यपि इनमें से एच० जी वेल्स ने विज्ञान के चमत्कारों को तो अन्य ने सामाजिक और मानवीय समस्याओं को अपनी विषय-वस्तु के रूप में ग्रहण किया । जीवन के दुःख-दर्द, देशभक्ति और व्यक्तिगत भावनाओं को प्रकट करने के लिए संगीतकारों, चित्रकारों आदि में भी स्वच्छन्दतावाद तथा यथार्थवाद की प्रवृत्तियों को अपनाया । सिम्फली, ओरेटोरियो और ओपेरा इसी के प्रतिफल थे । लुडविग वॉन बीथोवन सर्वकालीन महान संगीतकार हुआ । रिचर्ड वाग्नर ने जर्मन राष्ट्रवाद को अपने संगीत से गौरवान्वित किया । चार्ल्स गूनू, जाबीजा, जूसेपी वाडॉ, फ्रेडरिक शोपाँ तथा एग्निस् जॉन पाट्रेविस्की इस युग के अन्य महान संगीतकार थे ।

चित्रकला के क्षेत्र में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का सर्वाधिक दर्शन फर्डिनैन्ड डी लाक्रावा के चित्रों में होता है । 1850 के दशक में पाश्चात्य सम्पर्क के लिए जापान के खुल जाने के बाद पश्चिमी कला पर जापानी चित्रशैली का प्रभाव पड़ा और एक नई शैली विकसित हुई जिसे "प्रभाववाद" कहते हैं । एडआर्ड मानी, जेम्स दिव्स्टर, क्लूड मोनी और पेरी रीन्वार इसी शैली के चित्रकार थे । व्यंग्य चित्र बनाने की भी परम्परा चल पड़ी । जॉन टेनयेल प्रसिद्ध व्यंग्य चित्रकार हुआ ।

इस प्रकार साहित्य और कला के क्षेत्र में उद्योगीकरण के बाद के युग का भौतिकवाद विभिन्न रूपों में दिखाई पड़ा ।

14.12 सारांश

इस इकाई में हमने देखा कि किस प्रकार उद्योगीकरण ने दुनिया का रूप ही बदल दिया । औद्योगिक पूंजीवाद का विकास हुआ जिसने लोगों के पारस्परिक सम्बन्धों को बदल दिया । इसके साथ ही कारखाना-पद्धति का भी विकास हुआ जिसने कारोबार के प्रौद्योगिकी तथा वाणिज्य दोनों पक्षों को अधिकाधिक वैज्ञानिक बना दिया । इस कारण प्रबन्धक मालिक से भी महत्वपूर्ण हो गया । आर्थिक क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक निर्भरता बढ़ी और जब-तब मन्दी और तेजी के दौर आने लगे । नगरीकरण और जनसंख्या की वृद्धि उद्योगीकरण के बाद की विशिष्टताएँ थी । लोगों के रहन-सहन के स्तर में अभूतपूर्व सुधार हुआ । राजनीतिक क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर साम्राज्यवाद का अभ्युदय और विस्तार हुआ तो राष्ट्रीय स्तर पर मजदूरों के अधिकारों के लिए लड़ाइयाँ लड़ी जाने लगीं । औद्योगिक पूंजीवाद ने अहस्तक्षेप से लेकर तरह-तरह के समाजवाद से सम्बन्धित विचारधाराओं को जन्म दिया तथा सामाजिक विधान बनाए जाने लगे । एक बहुत महत्वपूर्ण बात इस युग में यह हुई कि मध्ययुगीन अन्धविश्वासों की जगह विज्ञान, साहित्य तथा कला आदि प्रत्येक क्षेत्र में भौतिकवाद का विकास हुआ ।

14.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. औद्योगिक पूंजीवाद क्या है? इसकी विशेषताएं बताइये ।
2. कारखाना पद्धति से आप क्या समझते हैं? किस तरह इस पद्धति में प्रबंधक स्वामी से अधिक महत्वपूर्ण होने लगे?
3. उद्योगीकरण के बाद किन कारणों से प्रायः मन्दी और तेजी जैसी आर्थिक असन्तुलन की घटनाएं घटने लगीं?
4. उद्योगीकरण के बाद नगरों के विकास का स्वरूप स्पष्ट कीजिए ।
5. उद्योगीकरण के बाद जनसंख्या की वृद्धि का स्वरूप स्पष्ट कीजिए ।
6. उद्योगीकरण के बाद लोगों के जीवन-स्तर में आए परिवर्तन की विवेचना कीजिए ।
7. उद्योगीकरण और आर्थिक साम्राज्यवाद का सम्बन्ध स्पष्ट कीजिए ।
8. उद्योगीकृत प्रदेशों में मजदूर-संघों का विकास रेखांकित कीजिए ।
9. औद्योगिक पूंजीवाद के प्रति विभिन्न बुद्धिवादियों का क्या-क्या रुख था?
10. आर्थिक क्रियाकलापों में अहस्तक्षेप की नीति से आप क्या समझते हैं?
11. आर्थिक क्रियाकलापों में सरकारी नियमन तथा सामाजिक विधानों की आवश्यकता क्यों पड़ी ? ये गरीबों की स्थिति बदलने में क्यों असफल रहे?
12. यूटोपिआई समाजवाद की विवेचना कीजिए
13. कार्ल मार्क्स और उसके अनुयायी आमूल परिवर्तनवादियों के विचारों का महत्व स्पष्ट कीजिए ।
14. समाजशास्त्र और मनोविज्ञान किस प्रकार भौतिकवाद के विकास का परिणाम थे ।
15. उद्योगीकरण के बाद साहित्य और कला के क्षेत्र में हुए परिवर्तन को स्पष्ट कीजिए।

14.14 प्रासंगिक पठनीय ग्रन्थ

- बार्न्स, द हिस्ट्री ऑफ वेस्टर्न सिविलिजाइजेशन, III
कार्ल्टन जे0 हेज, ए जेनेरेशन ऑफ मैटेरियलिज्म 1871 - 1914
डी0 एस0 मैक्कॉल, नाइन्टीन्थ सेन्चुरी आर्ट
ई0 जे0 हॉब्सबान, इण्डस्ट्री ऐन्ड एम्पायर
एफ0 एल0 मुसबॉम, हिस्ट्री ऑफ द इकोनॉमिक इन्स्टिट्यूशन्स ऑफ मॉडर्न यूरोप
फ्रीडेल, कल्चरल हिस्ट्री ऑफ द मॉडर्न एज, III
जी ब्रान्डेस, मेन करेन्ट्स इन नाइन्टीन्थ सेन्चुरी लिटरेचर
जी0डी0एच0कोल, ए हिस्ट्री ऑफ सोशलिस्ट थॉट, III और III
एच0 हीटन, इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ यूरोप
एच0 स्ट्रुअर्ट ह्यूज, कॉन्शसनेस ऐन्ड सोसाइटी: द ओरियेन्टेशन ऑफ यूरोपियन सोशल
थॉट 1890-1930
एम0 डी0 बिडिस, द एज ऑफ द मासेज: आइडियाज ऐन्ड सोसाइटी इन यूरोप सिन्स
1870
न्यू कैम्ब्रिज मॉडर्न हिस्ट्री
पीटर हॉल, द वर्ल्ड सिटीज

इकाई-15

फ्रांस की क्रान्ति-राज्य का स्वरूप एवं बुद्धिजीवी वर्ग और क्रान्ति

इकाई संरचना

- 15.0 उद्देश्य
- 15.1 प्रस्तावना
- 15.2 प्रचलित संरचनाएँ
- 15.3 राजनीतिक संरचना
- 15.4 सामाजिक संरचना
- 15.5 धार्मिक संरचना
- 15.6 आर्थिक संरचना
- 15.7 बुद्धिजीवी वर्ग
 - 15.7.1 मोन्टिस्क्यू
 - 15.7.2 वाल्टेयर
 - 15.7.3 जॉन जैक रूसो
 - 15.7.4 अन्य विचारक
- 15.8 राज्य का बदलता हुआ स्वरूप
- 15.9 सारांश
- 15.10 अभ्यास कार्य
- 15.11 संदर्भ अध्ययन सामग्री

15.0 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको जानकारी होगी कि फ्रांस की राज्यक्रान्ति के पूर्व फ्रांस में राज्य, समाज, धर्म एवं आर्थिक स्वरूप किस तरह का था ? इसके अलावा आपको जानकारी मिलेगी कि इन स्वरूपों से किस तरह जनता ने अपना असंतोष प्रकट किया । इस असंतोष को भड़काने एवं क्रान्ति को सफलता प्रदान करने में वही के अनेक महान दार्शनिकों एवं बुद्धिजीवियों ने अपना महान योगदान दिया जिनके अभाव में इस क्रान्ति का होना असंभव था, उनके इस योगदान के बारे में जानकारी प्रदान करना भी हमारा उद्देश्य है । इसके साथ ही क्रान्ति के बाद राज्य, समाज एवं धर्म के बदलते हुये स्वरूप की जानकारी भी देना हमारा उद्देश्य है।

15.1 प्रस्तावना:

क्रान्ति प्रगति की जननी होती है । क्रान्ति के कारण ही मानव समाज में परिवर्तन होते रहते हैं । मनुष्य उसी अवस्था में परिवर्तन (क्रान्ति) चाहता है । जब वह अपनी पतित अवस्था

से खीझ कर उससे मुक्त होने की कोशिश करता है । अमेरिका वासियों ने दासता से बंधन मुक्त होने के लिये ही विद्रोह कर दिया और परिणामतः वे 1776 ई. स्वतंत्र हो गये । उनकी सफलता से प्रेरित होकर फ्रांसिसियों ने अपनी पतित अवस्था से मुक्त होने के लिए शासक वर्ग के विरुद्ध विद्रोह कर दिया । जिसके कारण उन्होंने न केवल पुरातन व्यवस्था को ही समाप्त किया बल्कि विश्व के अन्य देशों में क्रान्ति की लहर को फैलाया 1789 ई. में उन्होंने निकम्मे शासन के जुएँ को उतार फेंका । जो विश्व इतिहास में "फ्रांस की राज्य क्रान्ति" के नाम से प्रसिद्ध है ।

क्रान्ति का वातावरण जब बनता है तो उसे सफल बनाने में उस देश एवं समाज की सामाजिक एवं राजनीतिक संरचना के साथ धार्मिक एवं आर्थिक संरचना भी क्रान्ति की सफलता को प्रभावित करती है । क्योंकि हम यह जानते हैं कि इन्हीं संरचनाओं की पृष्ठभूमि में क्रान्ति का जन्म होता है एवं इसी पृष्ठभूमि में जनसाधारण (अधिकारहीन) अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागृत होता है ।

15.2 प्रचलित संरचनाएँ:

फ्रांस की क्रान्ति को समझने के लिए उन परिस्थितियों एवं संस्थाओं का परीक्षण करना आवश्यक है जिन्होंने उसको जन्म दिया । तभी हमारा दृष्टिकोण ठीक हो सकता है । और तभी हम चीजों का सही मूल्यांकन एवं विश्लेषण कर सकते हैं । फ्रांस के जीवन में क्रान्ति ने एक आमूल चूल परिवर्तन किया यानि शताब्दियों पुरानी सामन्ती व्यवस्था को हटाकर आधुनिक प्रजातंत्रीय व्यवस्था को जन्म दिया । वहां का सामाजिक एवं राजकीय ढांचा एक नये सांचे में ढाला गया एवं कुछ नये एवं दूरगामी सिद्धान्तों की बुनियाद पर खड़ा किया गया ।

15.3 राजनीतिक संरचना-

मध्ययुगीन विश्व में स्वेच्छाचारी निरंकुश एवं एकतंत्र राजा राज्य करते थे । फ्रांस इसका अपवाद नहीं था । वहाँ पर भी एक तंत्र स्वेच्छाचारी शासक राज्य करते थे । जो वंश क्रमानुगत होने के साथ-साथ अपने को सिर्फ ईश्वर के प्रति उत्तरदायी मानते थे । जिनकी इच्छा, ही कानून थी । इस व्यवस्था की चोटी पर सम्राट विराजमान था जो राज्य की उच्च, वेदीप्यमान, प्रमुख राष्ट्र की शक्ति, प्रतिष्ठा तथा समृद्धि का मूर्त रूप था जो यह दावा करता था कि मैं इस पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि हूँ । जिस प्रकार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर परमेश्वर ब्रह्माण्ड के विविध प्राणियों की किसी भी प्रकार सम्मति लिये बिना स्वेच्छा से शासन करता है ठीक उसी तरह राजा अपने राज्य में प्रजा की सम्मति पर जरा भी आश्रित हुये बिना अपनी इच्छा से शासन करता है । फ्रांसिसी शासक इसी मत की अनुपालना करते हुए जनता पर निरंकुश एवं एकाधिकारपूर्ण राज्य करते थे । लुई 14 वां अपने को राजा बताता था । फ्रांस की जनता राजा के इन शब्दों का विरोध करने में असमर्थ थी । फ्रांस के निरंकुश शासक को प्रशासनिक कार्यों में दक्ष होना अनिवार्य है, लेकिन फ्रांस के निरंकुश शासक अयोग्य एवं अदूरदर्शी थे । प्रशासन मुख्यतः दरबारियों द्वारा ही चलाया जाता था । यह जानते हुए भी कि जनता में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता पैदा हो गई है यह भी उन्हें आभास हो गया था

कि इस जागरूकता के बादलों को नष्ट नहीं किया जा सकता है फिर भी उसने इस दिशा में कोई प्रयत्न नहीं किया, जिसके परिणाम स्वरूप इस क्रान्ति का विस्फोट हुआ। हालाँकि वह गम्भीर, उत्तरदाई, बुद्धिमान, सदाशंय, गुणी एवं दयालु था, लेकिन समय की नाजुकता को देखते हुए उसमें अन्य गुणों का होना भी जरूरी था। वह कोई कार्य अपनी इच्छा शक्ति से नहीं बल्कि अपने दरबारियों मंत्रियों, अपनी पत्नी की माँगों से विवश होकर करता था। किसी व्यक्ति को कैद करना, सजा देना राजा की स्वैच्छाचारिता का एक उदाहरण था। करों को इकट्ठा करने के लिए उन्हें ठेके पर दे दिया जाता था। जिससे ठेकेदार मनमाना कर जनता से वसूल करते और जनता का खून चूसते। शासक वर्ग की विलासिता एवं शान-शौकत का कोई अन्त नहीं था।

राज्य का बाह्य ढांचा चकाचौंध एवं जगमगाता होने के बावजूद भी आन्तरिक रूप से वह सड़ा हुआ था। वहाँ की शासन व्यवस्था-अव्यवस्था का शिकार थी एवं समय के विपरीत दिशा में थी। सरकारी ढांचे में कोई योजना या व्यवस्था देखने को नहीं मिलती थी। अर्थ यह है कि राज्य की मशीनरी निकम्मी एवं अवैज्ञानिक थी। यह भोगविलास प्रधान, स्वैच्छाचारी एकतंत्र शासन जनता के लिए असह्य न होता यदि इसमें योग्यता एवं अनुभव होता। एकतंत्र (निरंकुश) शासन हजारों सालों तक दुनिया में रहे हैं, लेकिन उनकी सफलता का राज उनकी मजबूती, शक्ति एवं दूरदर्शिता में निहित था। परन्तु फ्रांसिसी शासन अव्यवस्थित विश्रुंखल एवं अकर्मण्यता का शिकार हो गया था। जिसके कर्णधारों ने इस की तरफ कोई ध्यान न दिया बल्कि वे अपने आमोद-प्रमोद, सम्मान एवं आराम में लिप्त रहते थे। किसी तरह लुई 14 वें, 15 वें ने तो अपना शासनकाल बिता दिया लेकिन लुई सोलहवें में शक्ति एवं क्षमता का अभाव होने के कारण ऐसा शासन ज्यादा दिनों तक नहीं टिक सका। जब उसे चेतना की आंधी ने अपने शिकंजे में कस लिया तो वह पुराने खोखले वृक्ष की तरह चरमरा कर धराशायी हो गया।

मेरी एंटोयनेट-

बूर्बा राजवंश के इतिहास में स्त्रियों प्रभाव सदैव ही अधिक रहा है जिसका मेरी एंटोयनेट अपवाद नहीं थी। इससे भी बड़ी बात यह थी कि यह प्रभाव हमेशा घातक सिद्ध हुआ है। मिराबॉ का कथन है कि सम्राट के आस-पास एक ही व्यक्ति है। वह उसकी पत्नी है। हलांकि वह गौरवपूर्ण, राजोन्वित थी लेकिन राजनीति अनुभव में शून्य थी। जब उसके हाथों राज कठपुतली बन गया तो इन दुर्बलताओं ने और भीषण रूप धारण कर लिया। फ्रांसीसी उसे योग्य माता की अयोग्य पुत्री एवं घृणा से आस्ट्रियन स्त्री कहा करते थे। दुर्भाग्य से वह हठधर्मी भी थी। वह ऐसे लुटेरों के दल की केन्द्र बनी हुई थी जो वहाँ की अव्यवस्था से ही अपना उल्लू सीधा करते एवं जो सुधार विरोधी थे। बिल्कुल अनजाने वह वित्त स्थिति को विषम बना ने एवं इस महान बरबादी की गति को तेज करने का निमित्त बन गई।

15.4 सामाजिक संरचना:

फ्रांस की सामाजिक संरचना स्वतंत्रता पर आधारित न होकर जन्ममूलक स्थिति पर आश्रित थी। फ्रांस में सामाजिक संगठन का आधारभूत सिद्धान्त यह था कि सभी समान व स्वतंत्र नहीं हैं। समाज स्पष्ट रूप से (I) अधिकार सम्पन्न वर्ग एवं। (II) अधिकार-हीन वर्ग

में विभाजित था । वहां की सामाजिक व्यवस्था बुराईयों कुरीतियों, असंख्य शिकायतों, कष्टप्रद और हानिकारक कुव्यवस्थाओं का भण्डार थी । जिसका न तो बुद्धि से कोई सम्बन्ध था और न ही बहुसंख्यक जनता के हितों से । इन कुप्रथाओं के कारण राष्ट्रीय जीवन के विकास की अनेक दिशाओं में रुकावटें पैदा, होती थीं । फ्रांस का समाज मुख्य रूप से तीन वर्गों में विभाजित था:-

(1) चर्च- समाज का एक महत्वपूर्ण वर्ग चर्च या उन से संबंधित पादरियों का था जो प्रथम एस्टेट के नाम से जाने जाते थे । यह राज्य के क्षेत्र में एक दूसरे राज्य के समान था, जिसकी अपनी सरकार और अपने कर्मचारी थे । देश की भूमि के लगभग 20% भाग पर चर्च का आधिपत्य था । जिससे भारी आय होने के बावजूद उसे एक फ्रैंक भी कर के रूप में नहीं देना पड़ता था । पादरी भी दो भागों में बंटे हुए थे- बड़े पादरी बिशप, आर्क बिषप, एबट आदि चर्च के ऊंचे पदों पर नियुक्त होते थे जिनके प्रभाव एवं समृद्धि की कोई सीमा न थी । सांसारिकता एवं भ्रष्टाचार ने उन्हें मानहीन कर दिया था । एक अवसर पर लुई 16 वें ने कहा था कि हमें कम से कम पैरिस का तो ऐसा आर्कबिषप चुनना चाहिये जो ईश्वर में विश्वास रखता हो । छोटे-पादरी धार्मिक विधि-विधानों एवं कर्मकाण्डों का सम्पादन करने के बावजूद भी अपना पेट बेफिकरी से नहीं भर सकते थे । इसी वजह ने चर्च के पतन में अपना सर्वाधिक योगदान दिया था । वे जनतंत्रवादी एवं जागरूक थे । यही कारण था कि निम्नवर्ग के पादरियों के हृदय में उच्च पादरियों के प्रति विद्वेषकी भावना थी इसलिए उन्होंने क्रान्ति के समय जनता का साथ दिया:-

(2) कुलीन वर्ग- सम्राट एवं उसके परिवार के लोगों के बाद समाज में कुलीनों का ही स्थान था । जो विशेषाधिकार पूर्ण एवं विशाल भू-भाग के स्वामी थे, जिस पर उन्हें कोई कर नहीं देना पड़ता था । फ्रांस में एक कहावत प्रचलित थी कि कुलीन लड़ते हैं पादरी प्रार्थना करते हैं एवं जनता पैसा देती है । जो मुख्यतः एक सामन्ती विचार था जिससे कुलीनों की श्रेष्ठता सिद्ध होती है । जनसाधारण को कुलीन की दुकानों से ही सामान लेना पड़ता था चाहें दूसरे स्थानों पर वे कितनी ही सस्ती क्यों न हो, कुलीन किसानों से फसल का 1/5 भाग कर के रूप में वसूलते थे । इनका पेशा न केवल मौज उड़ाना बल्कि दरबार की साजिशों में व्यस्त रहना भी था । जनता के हृदय में सामन्त वर्ग के प्रति जो घृणा थी वह वास्तव में स्वार्थी एवं लालची दरबारी सामन्तों के प्रति ही थी । प्रान्तीय सामन्त प्रचलित व्यवस्था से खिन्न थे । न्यायिक सामन्त उदार विचारों के थे उनके विशेषाधिकारों पर आंच आने पर पुरातन व्यवस्था के समर्थक बन जाते थे । सामाजिक संरचना में प्रचलित यही प्रवृत्ति उस विकट आर्थिक विषमता का कारण थी, जो प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से क्रान्ति के लिए जिम्मेदार थी ।

(3) किसान- फ्रांसिसी समाज का एक महत्वपूर्ण अंग किसान थे जो तृतीय एस्टेट के नाम से भी जाने जाते थे । इसी वर्ग की हालत सबसे ज्यादा खराब थी । किसान अपने मालिक के लिए ही पैदा होते एवं उसी के लिए मरते थे । किसानों को भारी मात्रा में कर देना पड़ता था। तुर्गों के अनुमान के आधार पर वे अपनी उपज का 55% कर देते थे । राजा के खर्च के लिए "तेलि कर"- देते थे जिस का राजा हिसाब नहीं देता था । इसके अलावा हरेक व्यक्ति को

नमक कर भी देना पड़ता था । जो असह्य था । सैनिक सेवा भी किसान बेगार में ही करते थे। इन सभी करों से किसान वर्ग हमेशा संकट में फंसा रहता था । सामन्त की चक्की से ही आटा पिसवाना, उसी के तन्दूर से रोटी पकवाना, उसी के कारखानों से शराब निकलवाना इत्यादि कार्य किसान पर्याप्त शुल्क देकर करवाते थे, जिससे भी उनकी दशा और खराब होती गई । कहा जाता है कि इस समय फ्रांस की जनता का 1/10 भाग बदहजमी से एवं 9/10 भाग भूख से मर रहा था । जीवन की ऐसी ही परिस्थितियों से वे दिन प्रतिदिन बल्कि प्रतिक्षण सुधारों की तीव्र आवश्यकता का अनुभव कर रहे थे । वे इतना जानते थे कि हमारा जीवन तभी सुधर सकता है जब सामन्ती कर हटा दिये जायें, और राज्य कर भी कम हो जायें । फ्रांस में क्रान्ति की सफलता का रहस्य वहाँ के सर्वसाधारण की अवस्था का उन्नत एवं जागरूक होना ही था ।

उच्च मध्य वर्ग- साहित्यकार, वकील, चिकित्सक लेखक, कवि, व्यापारी, साहूकार, कलाविज्ञ, सरकारी नौकर और छोटे-छोटे कारखानों के मालिक इस वर्ग में शामिल थे । जो व्यवहार कुशल व्यवसायी होने के साथ-साथ दिल-दिमाग और धन के स्वामी भी थे । समझदार, कर्मठ, शिक्षित एवं धनी होने के कारण प्रचलित व्यवस्था से इन्हें सबसे ज्यादा असंतोष था । उच्च वर्गों का व्यवहार इनके प्रति इतना असह्य था कि उन्हें कदम-कदम पर हीनता का अनुभव होता था । लेकिन उनकी जागरूकता, शिक्षा-दीक्षा से वे समान्तों के व्यवहार का जवाब घृणा एवं ईर्ष्या से देते थे । इस श्रेणी के लोगों ने ही फ्रांस में पहली बार "जनतंत्र" नामक वस्तु को पैदा किया । राज्य की दिवालियेपन की स्थिति से उनके स्वार्थों पर कुठाराघात हो रहा था, क्योंकि उन्होंने बड़े-बड़े कर्जे राज्य को दे रखे थे । राजनीतिक दृष्टि से इनकी हालत एक भूखे-नंगे किसान जैसी थी । इन्हीं कारणों से वे प्रचलित व्यवस्थाओं से असंतुष्ट थे । राज्य क्रान्ति में इन्हीं लोगों का सर्वाधिक समर्थन एवं सहयोग रहा था । क्रान्ति में इन्हें स्पष्ट रूप से अपनी दुराव्यवस्था के अन्त होने की सम्भावना नजर आ रही थीं ।

औद्योगिक एवं व्यावसायिक वर्ग:

18 वीं सदी में यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति हो चुकी थी, जिसके कारण यूरोप एवं दूसरे महाद्वीपों में औद्योगिक क्षेत्र में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे थे । मानवीय श्रम का स्थान अब बड़ी-बड़ी मशीनों ने ले लिया था जिसके कारण अब उत्पादन अधिक और श्रेष्ठ होने लगा था । ग्रामीण जनता मजदूरी के लिए शहरों की ओर पलायन करने लगी थी । फ्रांस भी इस क्रान्ति से अछूता नहीं रहा था । जिसके प्रभाव दृष्टिगोचर होना शुरू हो गये थे । जिसके कारण वहाँ पर भी एक उद्योग-धंधों से सम्बन्धित वर्ग का विकास हो रहा था । उद्योग-धंधों के स्वामी आन्तरिक एवं बाह्य व्यापार द्वारा धनी होते जा रहे थे । इसके अलावा उन कारखानों में काम करने वाले मजदूरों का भी एक वर्ग धीरे-धीरे अपना रूप ग्रहण कर रहा था । ऐसे मजदूरों की संख्या लगभग 25 लाख थी । शहरों का व्यावसायिक जीवन उस समय था तो आर्थिक श्रेणियों में संगठित था या छोटे-छोटे कारखानों में । जो मजदूर इन श्रेणियों के सदस्य थे उनकी हालत बुरी न थी । लेकिन उनकी आजादी के मार्ग में इन श्रेणियों के कानून थे । जो मजदूर कारखानों में काम करते थे उनकी अवस्था बहुत खराब थी । उन्हें काफी समय तक काम करने के बदले काफी कम वेतन मिलता था । उनकी मेहनत थकाने वाली और कष्टप्रद थी

। इनका कोई संगठन न होने के साथ-साथ ये काफी असंतुष्ट भी थे । इन कारखानों की वजह से एक नई तरह की श्रेणी विकसित हो रही थी जो शहरों में रहती हुई नवीन बातों की जानकारी रखती हुई और उत्पत्ति का सारा कार्य करते हुये भी पूर्णतया असहाय थी । इस श्रेणी के लोगों को अभी तक अपनी शक्ति व महत्व का ज्ञान नहीं हुआ था फिर भी ये अपने हितों को कुछ-कुछ समझने लगे थे । और यह इसी का परिणाम था कि यद्यपि फ्रांस की राज्य क्रान्ति राजनीतिक स्वाधीनता की स्थापना के लिए विशेष रूप से प्रयत्न कर रही थी । तथापि आर्थिक समस्या की भी कुछ झलक उसमें विद्यमान थी ।

अन्त में, सारे देश में आर्थिक प्रतिबन्ध लगे हुए थे, जैसे गिल्ड विनियम, नगर-विनियम, प्रान्तीय सीमा शुल्क, सामन्ती सीमा शुल्क इत्यादि । ये प्रतिबन्ध कहीं-कहीं दूसरे विरोधी थे और कहीं एक दूसरे के ऊपर थे । जिनकी वजह से अव्यवस्था बढ़ रही थी, जो व्यापार एवं व्यवसायों की उन्नति में बाधक थी ।

15.5 धार्मिक संरचना-

इस युग में फ्रांसीसी जनता को धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी । हालांकि अधिकांश, जनता रोमन कैथोलिक चर्च को मानने वाली थी, लेकिन प्रोटेस्टेन्टों एवं यहूदियों को भी काफी बड़ी तादाद वहां बसती थी । 1685 में नान्ते का प्रसिद्ध धार्मिक अध्यादेश रद्द हो जाने की वजह से प्रोटेस्टेन्ट धर्म अवैध घोषित कर दिया गया था । इसी कारण प्रत्येक व्यक्ति का रोमन कैथोलिक चर्च के अधीन होना परम आवश्यक था । प्रोटेस्टेन्ट धर्म का पालन एक अपराध था । जिसके लिए कठोर श्रम की सजा भी दी जाती थी । विदेशी समझे जाने वाले यहूदियों के साथ सहिष्णुता का व्यवहार होने के बावजूद उनकी अपमान जनक स्थिति थी । विधर्मियों को अपने विश्वासों के अनुसार स्वतंत्रतापूर्वक धार्मिक कृत्यों को करने का अधिकार भी नहीं था । चर्च धार्मिक स्वतंत्रता एवं सहिष्णुता के पूर्णतया विरुद्ध था । इसी कारण वालतेयर जैसे दार्शनिक उसके घोर शत्रु बन गये थे । एक ओर तो फ्रांस में धार्मिक स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध था, दूसरी तरफ वहां नास्तिकता कोई प्रवृत्ति बढ़ रही थी । सिर्फ सर्वसाधारण जनता ही नहीं बल्कि पादरी वर्ग में भी नास्तिकता की लहर जोर पकड़ती जा रही थी ।

15.6 आर्थिक संरचना-

फ्रांस यूरोप का एक समृद्ध देश था जो कि महान राष्ट्रीय पराजयों के बावजूद भी समृद्धि की ओर अग्रसर हो रहा था । लेकिन शासक वर्ग द्वारा मनचाहे ढंग से खर्च करने एवं कृषि की तरफ पूर्ण ध्यान न देने के कारण देश की अर्थ-व्यवस्था डगमगाने लगी जिसने एक विकराल रूप ले लिया था । वहां की आर्थिक अव्यवस्था ही बहुत कुछ सीमा तक बढ़ते हुये असंतोष का कारण थी । कुलीन एवं चर्च वर्ग सर्वाधिक सम्पन्न था, लेकिन ये वर्ग-करों से मुक्त थे, और विलासिता पूर्ण जीवन व्यतीत करते थे । मध्यम श्रेणी की आर्थिक दशा भी अच्छी थी, लेकिन सबसे खराब अवस्था किसानों की थी, जिनको अपनी आमदनी कम से कम 80% भाग करों के रूप में देना पड़ता था ।

कर वसूलने के लिए सरकारी कर्मचारियों की व्यवस्था नहीं थी इसके लिये ठेकेदार नियुक्त किये जाते थे । जो मनमाना कर वसूल करके सरकार को निश्चित रकम ही देते थे । इस अव्यवस्था को समाप्त करने के लिए सरकार ने कोई उचित व ठोस कदम नहीं उठाया । लुई 16 वें ने इस अव्यवस्था को समाप्त करने के लिए तुर्गो को अपना वित्त विभाग सौंपा । लेकिन दरबारी एवं सम्राज्ञी ने उसकी मिव्ययता का विरोध करके सम्राट के द्वारा उसे पदच्युत करा दिया । उसके बाद नेकर को वित्तमंत्री बनाया गया जो आर्थिक समस्याओं के समाधान के लिए प्रसिद्ध था । फ्रांस की अर्थव्यवस्था को सुधारने की दिशा में उसने महत्वपूर्ण कार्य भी किये, लेकिन साम्राज्ञी द्वारा विरोध करने के कारण उसे भी स्तीफा देना पड़ा । उसके बाद कैलोन को नियुक्त किया जिसने सभी वर्गों पर समान रूप से कर लगाने की योजना बनाई लेकिन पादरी एवं कुलीन वर्ग के विरोध के कारण उसे भी अपने पद से हटना पड़ा । 1787 में "प्रसिद्ध पुरुषों की सभा" राजधिवेशन भी समस्या का समाधान करने में असफल रही । राजा के द्वारा नये कर लगाने की योजना का पैरिस की पार्लमां ने विरोध किया । राजा ने उसे भंग करके उसके सदस्यों को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया परन्तु सैनिकों ने गिरफ्तार करने से मना कर दिया फलतः विवश होकर 1789 में सम्राट को एस्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाने की घोषणा करनी पड़ी ।

आस्ट्रिया के उत्तराधिकार युद्ध, सप्तवर्षीय युद्ध एवं अमरीका के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के कारण फ्रांस की अर्थव्यवस्था और ज्यादा खराब हो गई । जैसे-जैसे आर्थिक व्यवस्था खराब होती गई वैसे-वैसे राष्ट्रीय ऋण भी बढ़ता गया स्थिति यह हो गई कि देश की आय राष्ट्रीय ऋण के ऊपर होने वाले ब्याज से भी कम हो गई ।

सम्राट एवं कुलीनवर्गीय सदस्यों को यह पूरा यकीन था कि इस सभा में कुलीनों एवं चर्च का बहुमत है इसलिए वे क्रान्ति का अन्त करने में सफल हो जायेंगे जो कि उनका भ्रामक विचार था । वास्तव में एस्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाना ही क्रान्ति का शुभारम्भ करना साबित हुआ ।

15.7 बुद्धिजीवी वर्ग:

यूरोप के सभी देशों की हालत ऊपर लिखित फ्रांसिसी अव्यवस्था जैसी ही थी । पुरातन व्यवस्था के खिलाफ सबसे पहले क्रान्ति फ्रांस में ही हुई । इसका प्रथम एवं महत्वपूर्ण कारण क्रान्ति की उस भावना का वही विकसित होना था जो वहाँ के बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा विकसित की जा रही थी । जिनमें से अनेक लेखक तथा दार्शनिकों ने सोई हुई जनता को जागृत किया और अपने लेखों एवं ग्रन्थों से मध्यवर्गीय जनता को प्रभावित किया । इतिहासकारों का कहना है कि फ्रांस की राज्य क्रान्ति से पूर्व फ्रांस में एक बौद्धिक क्रान्ति हुई थी जिसके अभाव में वहाँ क्रान्ति का होना एवं सफलता प्राप्त करना संदिग्ध था । इसी वर्ग ने लम्बे समय तक वहाँ की जनता में स्वतंत्रता, समानता बंधुत्व की भावना का विकास किया । उनके विचारों से प्रेरित होकर देश में अनेक नेताओं का अभ्युदय हुआ । जिन्होंने मनुष्य जाति के हजारों सालों से चले आ रहे विश्वासों के आगे प्रश्न चिन्ह लगा दिया । और नये विचार जनता के समक्ष प्रस्तुत किये । मोन्टेस्क्यू, वाल्टेयर, रूसों, दिदरों और अन्य अनेक विचारकों की लेखनियों से निकली पुस्तकों

ने मानसिक जगत की गहराई को धरातल तक आन्दोलित दिया । उन्होंने राजनीति, धर्म, समाज, व्यवसाय आदि से संबंधित अगणित विचारों के संचार की गति को तीव्र कर दिया । इस ज्वलनशील साहित्य का क्लेवर विशाल तथा प्रभाव अत्यधिक गहरा था । उनकी लेखनी से स्वतंत्रता का प्रेम और न्याय की अभिलाषा निकल कर वायुमण्डल में फैल गई । उने उदार विचारों ने जनता के मस्तिष्क में घर कर लिया । विचारों ने इस व्यापक आन्दोलन एवं मंथन ने प्रचलित बुराईयों तथा उनके निवारण से संबंधित इस निरन्तर तथा गम्भीर वाद-विवाद ने आने वाली उन महान घटनाओं का मार्ग-प्रशस्त किया, जो फ्रांस तथा समस्तयूरोप के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुई।

इस बुद्धिजीवी वर्ग के महान विचारक उनके एवं उसके प्रभाव के बारे में हम संक्षेप में वर्णन करना चाहेंगे ।

15.7.1 मोन्टेस्क्यू

फ्रांसिसी राजतन्त्र की नींव की कटु आलोचना एवं तीव्र व्यंग्य का प्रहार सर्वप्रथम एक न्यायिकवर्ग के सामन्त, न्यायाधीश एवं उच्च श्रेणी के वकील मोन्टेस्क्यू (1689-1755 ई.) ने किया । हालांकि वह क्रान्तिकारी नहीं था । लेकिन कालान्तर में उसके विचारों ने क्रान्ति में महत्वपूर्ण योगदान दिया । वह राजा का विरोधी न होकर उसके दैवी-अधिकार का विरोधी था । कानून की आत्मा (Spirit of this law) उसकी महान कृति थी । उसने रहस्य के उस आवरण को, जिससे मनुष्य ने अपनी समस्याओं को ढक कर रखा था, फाड़कर फेंक दिया । उनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रचलित दैवी सिद्धान्त की तिरस्कारपूर्ण उपेक्षा की । उसने अपने विचारों के विश्लेषण एवं परीक्षण से इंग्लैण्ड की शासनव्यवस्था को श्रेष्ठ बताया । मोन्टेस्क्यू ने इस बात पर भी जोर दिया कि एक सुनियमित राज्य में सरकार की तीनों शक्तियाँ-विधायी, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका- को पृथक किया जाना चाहिये ताकि सत्ता के दुरुपयोग की संभावना न रहे और ऐसी व्यवस्था भी आवश्यक है जिसमें विभिन्न सत्ताएँ एक दूसरे पर अंकुश बन सकें । मोन्टेस्क्यू ने सामन्तवादी सामाजिक संबंधों की कटु आलोचना की । चर्च के वर्चस्व का विरोध किया और राजनीतिक स्वतंत्रता का नारा दिया । शक्ति पृथक्करण तथा अवरोध और सन्तुलन के सिद्धान्त का फ्रांस के उन सब संविधानों पर गहरा असर पड़ा जो 1789 के बाद बने और उन्होंने उस देश की सीमा के बाहर भी संविधान निर्माताओं को प्रभावित किया । मोन्टेस्क्यू की कृति बुद्धिमतापूर्ण विचारों का भण्डार सिद्ध हुई । चूँकि मोन्टेस्क्यू एक विद्वान, लेखक एवं अध्ययनशील न्यायाधीश था और उसकी भाषा तथा शैली गंभीर एवं औजपूर्ण थी इसलिए उससे फ्रांस में तथा अन्यत्र विचारों, वाद-विवाद और कार्यों को भारी उत्तेजना मिली ।

15.7.2 वाल्टेयर (1694-1778)

यूरोपीय इतिहास में एक महान मनीषी वाल्टेयर हुआ है । जिस तरह से लूथर या दूरास्मस के युग की चर्चा की जाती है वैसे ही वाल्टेयर के काल की चर्चा होती है । वह बौद्धिक

स्वतंत्रता का महान पोषक था । लोग इसी कारण उसे राजा वाल्टेयर कहकर पुकारते थे । संसार में उससे अधिक स्वतंत्र, निर्भीक एवं साहसी आत्माएँ बहुत कम हुई हैं । वह कुलीन श्रेणी का न होकर मध्यवर्ग का था । अपने समय के अत्याचारों एवं अन्यायों का उसे प्रत्यक्ष अनुभव था । कुछ समय वह राजदरबार में भी रहा । हालांकि उसके चरित्र में दुर्लभताएँ थी, लेकिन मानव स्वतंत्रता संग्राम में लड़ने वालों के लिए वह दिन में दिशा सूचक बादल का, रात में प्रकाश स्तम्भ का काम करता था । पुरातन व्यवस्था के प्रति उसके दिल में गहरी एवं स्थायी घृणा थी, उसका विश्वास था कि पुरातन व्यवस्था को उखाड़ देने में ही भलाई है । उसका मानना था यदि हमें नवीन युग की आधारशिला रखनी है तो हमें पुरातन व्यवस्था को इस जहाँ से मिटाना ही होगा । तलवार की धार के समान उसकी शैली स्पष्ट, नुकीली, लोचदार और तिखी थी । व्यंग्य लिखने में वह सिद्धहस्त था । अपने युग के आडम्बरों, अत्याचारों और धर्मान्धता पर उसने इन शास्त्रों का जमकर प्रयोग किया और अपनी लेखनी की विध्वंसक आग से उन्हें जला डाला । उसने कानून तथा न्याय व्यवस्था की बुराईयों, अन्यायों की एवं मनमाने ढंग से निर्दोष नागरिकों को कारागार में डालने और यातना देने की प्रथा की खुलकर भर्त्सना की । वह कैथोलिक चर्च का कट्टर आलोचक था । वह चर्च को कुख्यात वस्तु कहा करता था । वाल्टेयर जनतंत्र शासन प्रणाली का पक्षपाती नहीं था । उसका कहना था कि सौ चूहों की बजाय एक शेर का शासन मुझे अधिक पसंद है । राज्य-व्यवस्था की विशेष बुराईयों पर उसने जोरदार प्रहार किया और राज्य के प्रति लोगों की जो श्रद्धा थी उसे कमजोर कर दी । वह अंग्रेजी न्याय-विधान का प्रशंसक एवं फ्रांसिसी न्याय विधान का कटु आलोचक था । व्यक्तिगत स्वतंत्रता का वह कट्टर समर्थक था । एक बार उसने कहा था कि "यद्यपि आप की बात से मैं सहमत नहीं हूँ लेकिन आपके ऐसा कहने के अधिकार की रक्षा के लिए मैं अपने प्राण भी दे सकता हूँ ।" चर्च एवं राज्य के दोषों के विरुद्ध उसने जो पुस्तकें लिखी उनके कारण लोगों का ध्यान उनकी बुराईयों की तरफ आकृष्ट हुआ और लोग इन दोषों को दूर कर एक नवीन युग की कल्पना करने लगे।

15.7.3 जॉन जैक रूसो- (1712-1778 ई.)

रूसो की राजनीतिक विचारधारा ने 18 वीं सदी की फ्रांसिसी बर्जुआ क्रांति की पूर्व वेला के दौरान फ्रांस के जनवादी हल्कों की सामाजिक चेतना पर अपरिचित प्रभाव डाला । उसके विचार आज भी पारले जैसे ही राजनीतिक संघर्ष का केन्द्र-बिन्दु बने हुए हैं । फ्रांस में क्रान्ति की भावना, को विकसित करने में सबसे प्रथम स्थान रूसो का है । वह एक नवीन युग एवं समाज की कल्पना करता था । उस के विचार में मानव का भूतकाल ही उज्ज्वल था । जब सब समान व स्वतंत्र थे । रूसो की सुप्रसिद्ध रचना" सामाजिक संविदा" है जिसमें उसने निरंकुश राजतंत्र की कटु आलोचना की है । रूसो लिखता है कि "मनुष्य स्वतंत्रता पैदा होता है लेकिन वह सदैव जंजीरों में जकड़ा रहता है । कुछ लोग अपने को दूसरों का मालिक समझता है लेकिन वस्तुतः वे दूसरों की अपेक्षा अधिक गुलाम होते हैं । यह परिवर्तन कैसे आ गया ? इस प्रश्न का जवाब देते हुए रूसो लिखता है कि "मानव समाज व राज्य में जनता की इच्छा ही सर्वोपरि

है सरकार की न्यायता इसी जनता की इच्छा पर निर्भर करती है जनता शासन करने के लिए किसी एक आदमी-राजा को नियत कर सकती है । पर उस आदमी की सत्ता जनता की इच्छा पर ही निर्भर है । जनता अपनी इच्छा को कानून की शकल में प्रकट करती है । जिसके अनुसार राजा को शासन करना चाहिये ।"

रूसो के ऐसे विचार 18 वीं सदी के लोगों के लिए "उग्र-क्रांतिकारी" विचार थे । राजा की इच्छा नहीं वरन् जन इच्छा ही कानून है । यहीं विचार फ्रांसिसी राज्य क्रान्ति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा था । उसने सभी लोगों को स्वतंत्र एवं समान मानते हुए उनके अधिकारों की रक्षा करना सरकार का उद्देश्य बताया । मोन्टेस्क्यू के विपरीत उसने अंग्रेजी शासन व्यवस्था को दोषमुक्त नहीं माना । उसके दो विचारों-जनता का प्रभुत्व एवं उनकी राजनीतिक स्वतंत्रता ने यूरोप के तत्कालीन राज्यों की जड़े खोदने में महत्वपूर्ण भाग अदा किया । इन सिद्धांतों ने फ्रांसिसी क्रांति को खूब प्रभावित किया ।

रूसो की विचार-सारणी के अनुसार राज्य का निर्माण जनता की आपसी संविदा (Contract) द्वारा हुआ है । अतः राज्य में लोकमत ही सर्वोपरि होना चाहिये । वह शासन पद्धति सर्वोत्तम है जिसमें बहुमत के आधार पर शासन होता है । सामाजिक संविदा के स्वरूप के बारे में अपनी धारणाओं के आधार पर रूसो जन-सम्प्रभुता का सिद्धान्त प्रतिपादित करते हैं । वह कहते हैं कि केवल सामान्य इच्छा ही राज्य की स्थापना के उद्देश्य-सामान्य कल्याण को ध्यान में रखते हुए राज्य की शक्तियों का संचालन कर सकती है ।" सामाजिक संविदा भी इसका अपवाद नहीं है।" रूसो के ये सिद्धान्त एक नये संदेश के समान सम्पूर्ण यूरोप में व्याप्त हो गये । फ्रांस के क्रान्तिकारियों के लिए रूसो के विचार धार्मिक-सिद्धान्तों का सा महत्व रखते थे । रूसो ने केवल पुरातन व्यवस्था की ही भर्त्सना नहीं की बल्कि अर्वाचीन युग का चित्र भी लोगों के सामने रखा । लोगों ने अनुभव किया कि यह नवीन चित्र बहुत ही सुन्दर है वे उसके अनुयायी हो गये । सेन्ट-जस्ट और रोबस्पियर भी अपने आपको रूसो का अनुयायी बताते हैं । व्यक्तिगत बुराईयों के बावजूद भी उसका प्रभाव क्रांति पर सर्वाधिक था । रूसो के महत्व को स्वीकारते हुए एक बार नेपोलियन महान ने कहा था- "यदि रूसो का जन्म न हुआ होता तो फ्रांसिसी क्रान्ति भी न हुई होती ।"

15.7.4 अन्य विचारक-

क्रान्ति के इन तीन अग्रदूतों के अतिरिक्त फ्रांस में पद विचारक भी हुए थे जिन्होंने अपने सिद्धान्तों के प्रचार से फ्रांस की बौद्धिक क्रान्ति में महत्वपूर्ण योगदान दिया था साथ ही इन विचारकों ने क्रान्ति की भावना का प्रादुर्भाव भी किया । इनमें दिदरो, क्वेसने, हालबैश, हैल्वेशियस इत्यादि मुख्य हैं । दिदरो (1713-1784) एक महान विद्वान था जिसने एक विशाल शब्द कोष प्रकाशित करने की योजना बनाई । जिसका उद्देश्य उस समय के संपूर्ण ज्ञान को सरल भाषा में पेश किया जाये ताकि लोगों को उनसे संबंधित विषयों का ज्ञान हो सके । यह विश्वकोष जनता के लिये लाभदायी सिद्ध हुआ था, लेकिन राजा व चर्च को विश्वकोष द्वारा

प्रचारित -ज्ञान असह्य था । यह योजना क्रान्ति की भावना को विकसित करने में सफल रही । मंत्रियों ने इन विश्वकोषों को राजसत्ता तथा धर्म के खिलाफ बताते हुए उन्हें पढ़ने से रोका जिसका जनता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । सरकारी विरोध के बावजूद भी विश्वकोषों की बिक्री बढ़ती रही । इनमें एकतंत्र राजसत्ता, धार्मिक असहिष्णुता, दास प्रथा, अन्याययुक्त टैक्स, सामन्त पद्धति, फौजदारी कानून आदि सभी विषयों पर विस्तार से विचार किया गया । इन विचारों से इन सबके दोष जनता के सामने आ गये । संक्षेप में ये विश्वकोष क्रान्ति की भावना को प्रज्ज्वलित करने में उपयोगी सिद्ध हुई ।

फ्रेन्कोइस क्वेसने (1694-1774) फ्रांस के राजा लुई 15 वें का वैद्य था जहाँ उसकी रुचि अर्थशास्त्र में पैदा हुई । क्वेसने ने अपने आस-पास बहुत से अर्थशास्त्रियों को इकट्ठा कर लिया जो उसे अपना नेता मानते थे । क्वेसने ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में समानता के सिद्धान्त को रखा

क्वेसने का मानना था कि बचत से नुकसान होता है क्योंकि इसको खर्च नहीं किया गया तो इसके द्वारा भुगतान की समानता का क्रम टूट जायेगा । उसकी नीति प्राकृतिक कानून की तरह "खुला छोड़ दो" के सिद्धान्त पर आधारित थी । वास्तव में वह 19 वीं सदी के उन लोगों में से एक था जिन्होंने समाज के वर्गों में समानता बनाये रखीं और इस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया कि पूर्णतया सामाजिक सन्तुष्टि खुली प्रतियोगिता से ही संभव है ।

पोल हेनरी डेट्रिक, हॉलबेश (1723-1789) फ्रांस का एक महान विश्वकोष शास्त्री एवं दार्शनिक था जो नास्तिकता एवं भौतिकवाद का कट्टर समर्थ था । डॉ. हॉलबेश ने दिदरों के विश्वकोष में 376 लेख प्रस्तुत किये जो अधिकांशतः रसायन-शास्त्र एवं अन्य संबद्ध विज्ञानों से संबंधित थे ।

क्लोड एडरीन हेलेशियस (1715-1771) विश्व में भोगवादिय दृष्टिकोण, धर्म के नैतिकतावादी विचारों पर आक्रमण और अपव्ययी शैक्षणिक सिद्धान्त इत्यादि बातों से जाना जाता है । हेलेशियस ने नैतिकता पर आधारित धर्म की भर्त्सना की जिसका जमकर विरोध हुआ और लेखों की प्रतियां जला दी गईं और उसका विरोध हुआ । हेलेशियस का मानना था कि सभी मनुष्य ज्ञान प्राप्ति के लिये समान हैं ।

15.8 राज्य का बदलता हुआ स्वरूप:

फ्रांस की आर्थिक दशा अपने निम्नतम स्तर तक गिर चुकी थी जिसे ऊपर उठाने से सम्बन्धित समस्त प्रयास विफल हो चुके थे । फलस्वरूप सम्राट को विवश होकर स्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाना पड़ा जो उसकी पराजय का सूचक थी । क्योंकि अब सम्राट ने भी यह मान लिया था कि आर्थिक समस्या के हल के लिए जनता का सहयोग अनिवार्य है । लेकिन सम्राट ने इस सभा की कार्यवाही के सम्बन्ध में कोई स्पष्ट कार्यक्रम नहीं बनाया । सभा के उद्घाटन के दूसरे दिन (6 मई 1789) सभा के तीनों सदनों में विकट संघर्ष छिड़ गया । गति-अवरोध के परिणामस्वरूप तीसरे सदन ने अपने को राष्ट्रीय सभा घोषित कर दिया । गति-अवरोध के वातावरण में इस सदन के लोगों ने एक शपथ ली जो "टैनिंस कोर्ट" की शपथ के नाम से ख्याति है जिसमें कहा गया था कि "जब तक राज्य का संविधान लागू नहीं हो जाता

हम एक रहेंगे ।" जनता ने राजा की निरंकुश शक्ति से लोहा लेने व प्रतिक्रियावादियों के गढ़ को समाप्त करने के लिए बेस्टील नामक एक जेल पर (14 जुलाई 1781) धावा बोलकर उसका पतन कर दिया जो जनता की भारी विजय थी । राष्ट्रीय सभा ने राजा के एक तंत्र स्वेच्छाचारी शासन का अन्त कर उसकी शक्ति को संविधान द्वारा सीमित कर दिया । इसके साथ ही सामन्ती प्रथा का भी अन्त कर दिया । इसी सभा के द्वारा 27 अगस्त, 1789 को रूसो के समझौते के सिद्धान्त के आधार पर मानव अधिकारों की घोषणा की जिसमें कहा गया कि मनुष्य स्वतंत्र एवं समान है । कानून जनता की इच्छा की अभिव्यक्ति है । इसके साथ ही आर्थिक अवस्था को सुधारने के लिए चर्च की जगहों बेच दी एवं मठों का भी अन्त कर दिया गया । राष्ट्रीय सभा का सबसे महत्वपूर्ण कार्य दो वर्ष के कठिन परिश्रम से 1791 ई. में नया संविधान बनाना था । जिसमें राजा के अधिकारों को सीमित कर दिया गया । मंत्रीगण सम्राट के प्रति उत्तरदायी न होकर राष्ट्रीय सभा के प्रति उत्तरदायी थे । नवीन संविधान के अन्तर्गत एक व्यवस्थापिका सभा की व्यवस्था की गई जिसके 750 सदस्यों का कार्यकाल दो वर्ष का था । जिनका निर्वाचन परोक्ष रूप से होता था । न्याय व्यवस्था सम्बन्धी भी नवीन कानून बनाये गये और न्यायाधीशों की नियुक्ति निर्वाचन के आधार पर की जाने लगी । न्याय निःशुल्क था । 30 सितम्बर 1791 ई. में सभा विसर्जित हो गई । सभा के बाद व्यवस्थापिका का निर्वाचन हुआ जिसके आधार पर राजा ने नवीन संविधान को स्वीकार कर लिया । व्यवस्थापिका भी कोई महत्वपूर्ण कार्य किये बिना 21 सितम्बर, 1792 को भंग हो गई जिसके बाद नेशनल कन्वेंशन अस्तित्व में आई । जिसने राजतंत्र को समाप्त कर गणतंत्र की घोषणा की । राजा पर मुकदमा चलाकर 21 जनवरी, 1793 ई. को उसे मृत्यु-दण्ड दिया । राजा के वध के कारण यूरोप के राष्ट्र फ्रांस के खिलाफ हो गये और फ्रांस यूरोपीय देशों से युद्ध में उलझ पड़ा । रानी पर देशद्रोह का - आरोप लगाकर 16 अक्टूबर, 1793 ई. में मृत्यु दण्ड दे दिया गया । नेशनल कन्वेंशन ने क्रान्ति कलेण्डर के तीसरे वर्ष में देश के लिए एक-नया संविधान बनाया जिसमें व्यवस्था की गई है कि कार्यपालिका शक्ति पांच व्यक्तियों की एक डाइरेक्टरी में निहित होगी । इसका अध्यक्ष ही फ्रांस का राष्ट्रपति था । इस संविधान में दो भवनों वाली एक व्यवस्थापिका का भी निर्माण किया गया जिसके सदस्यों के निर्वाचन का आधार सम्पत्ति था । कर दाता ही मतदाता थे । इस संविधान को पास कर कन्वेंशन 26 अक्टूबर, 1795 ई. में भंग हो गई । कन्वेंशन की समाप्ति पर फ्रांस में डाइरेक्टरी का शासन शुरू हुआ जिसका महत्वपूर्ण कार्य फ्रांस के शत्रु राष्ट्रों के विरुद्ध युद्ध जारी रखना था । इस समय तक जनता रक्तपात एवं अव्यवस्था से थक चुकी थी जो अब शासन में दृढ़ता पसंद करने लगी । यह माना जाता है कि दीर्घकालीन अव्यवस्था अशांति से डिक्टेटरशिप का जन्म होता है इसी तरह से फ्रांस में भी अव्यवस्था एवं अशांति के वातावरण में नेपोलियन नामक डिक्टेटर का उदय हुआ ।

15.9 सारांश:

फ्रांसिसियों ने अपनी पुरातन व्यवस्था के जुएँ को उतार फेंकने एवं अपनी पतित अवस्था से मुक्त होने के लिए न केवलशासक वर्ग के विरुद्ध विद्रोह किया बल्कि विशेषाधिकार

सम्पन्न वर्गों को भी विशेषाधिकार हीन बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया । 1789 ई. में उन्होंने निकम्मे शासन के जुएँ को उतार फेंका और स्वतंत्रता समानता एवं लोकतांत्रिक सिद्धान्तों के आधार पर प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित की । क्रान्ति किसी एक कारण या परिस्थिति से नहीं बल्कि सैकड़ों वर्षों की परिस्थितियाँ इसका निमित्त बनती है । इन परिस्थितियों में वही की राजनीतिक संरचना मुख्य रूप से क्रान्ति के लिए उत्तरदायी थी वही निरंकुश स्वेच्छाचारी शासकों का आतंक पूर्ण राज्य था जो जनता पर ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में राज्य करते थे । जनता उनकी निरंकुशता पर अंकुश लगाने में असमर्थ थी, शासक प्रशासनिक कार्य अपनी इच्छा से नहीं बल्कि बाह्य लोगों के दबाव से करता था । शासन व्यवस्था-अव्यवस्था का शिकार एवं समय के विपरीत थी । तात्पर्य यह है कि सरकारी मशीनरी निकम्मी एवं अवैज्ञानिक थी । लुई 16 वां जनता की भावना को समझने में असमर्थ था । उसकी नासमझी एवं अदूरदर्शिताने ही उसके स्वेच्छाचारी शासन का अन्त कर दिया । उसकी पत्नी भी उसके पतन में बराबर की भागीदार थी । क्योंकि वह महत्वाकांक्षी थी, चाटुकर लोगों का केन्द्र थी । राज्य का हित-अहित जाने बिना राज्यादेश निकाल देती थी । लोग उसे घृणा से आस्ट्रियन स्त्री पुकारा करते थे । महान अर्थशास्त्रियों के आर्थिक सुधारों का उसके द्वारा विरोध करने से ही आर्थिक-व्यवस्था निम्नतमस्तर तक पहुँची जो क्रान्ति के लिए कम उत्तरदायी न थी ।

फ्रांस की सामाजिक संरचना भी दोषपूर्ण एवं असमानता के ढांचे पर आधारित थी । कुछ लोग तो विशेषाधिकार सम्पन्न एवं कुछ विशेषाधिकारहीन थे जिनकी अवस्था दासों जैसी ही थी । चर्च राज्य के भीतर के अलग-राज्य था जिसके पास विशाल भू-भाग एवं खजाना था जो भ्रष्टाचार एवं विलासिता का केन्द्र बना हुआ था । पादरी धार्मिक कृत्यों में भाग न लेकर सांसारिक सुखों में लिप्त रहते थे । इनकी विलासिता जनसाधारण की मेहनत पर टिकी थी । कुलीन वर्ग भी विशेषाधिकार पूर्ण एवं विशाल भू-भाग का स्वामी था । जिस पर उन्हें कोई कर नहीं देना पड़ता था । जनसाधारण ही कुलीनों की विलासिता का स्रोत था । इनका पेशा-दरबार की साजिशों में भी लिप्त रहना था । न्यायिक एवं प्रान्तीय सामन्त भी प्रचलित व्यवस्था से खिन्न थे । फ्रांसिसी समाज का एक महत्वपूर्ण वर्ग किसान था जो शोषण एवं हर तरीके के अन्याय का शिकार था । वह न केवल राज्य एवं चर्च को भारी कर देता था बल्कि उसे बेगार भी करनी पड़ती थी । कुलीन की दुकान से ही सारा खरीदना अनिवार्य था चाहे दूसरी जगहों पर वह सामान कम मूल्य में ही क्यों न मिल रहा हो । ऐसा अनुमान था कि उनकी आय का 55% भाग राज्य करों के रूप में वसूल करता था लेकिन वे लोग अपनी इस अवस्था से परिचित थे और हमेशा यह सोचते रहते थे कि उनकी पतित अवस्था तब ही समाप्त हो सकती है, जब सामन्ती कर हटा दिये जायें एवं राज्य कर कम हो जायें । इसके अलावा यूरोप के अन्य देशों की तुलना में वे जागरूक भी थे । उच्च मध्यवर्ग में भी पर्याप्त असंतोष था । यह वर्ग भी अपने कार्यों एवं लेखनी से अपनी दुर्दशा का अन्त करना चाहता था । धार्मिक संरचना भी क्रान्ति के लिए उत्तरदायी थी । वही रोमन कैथोलिक धर्म को छोड़कर अन्य धर्मावलम्बियों को धार्मिक स्वतंत्रता न ही थी । जिसके कारण अन्य सम्प्रदायों में भी असंतोष था । आर्थिक संरचना भी दोष पूर्ण थी । उच्च वर्ग करों से मुक्त था जनसाधारण पर भारी कर लगे हुए थे ।

कर इकट्ठा करने की प्रक्रिया भी दोष पूर्ण थी । राज्य की आय राष्ट्रीय ऋण पर होने वाले ब्याज से भी कम थी । इस अवस्था से मुक्ति पाने के लिए ही राजा को एस्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाना पड़ा था ।

हालांकि वहाँ के लोग प्रचलित व्यवस्था में परिवर्तन चाहते थे लेकिन उनको मार्ग-दर्शन एवं उनमें जागृति का अभाव था उनको मार्ग-दिखाने एवं क्रान्ति का वातावरण तैयार करने का श्रेय वहाँ के बौद्धिक वर्ग को जाता है जिसने अपनी लेखनी एवं भाषणों से जनता में चेतना जगाई, एवं पुरातन व्यवस्था के विरोध में खड़ा किया । इन महान विद्वानों में रूसों, वाल्टेयर, मोन्टेस्क्यू एवं अन्य विद्वान भी थे जिन्होंने क्रान्ति को संभव बनाया । उनके अभाव में क्रान्ति का सफल होना संदिग्ध था । इस वर्ग ने राजनीति, धर्म, समाज व्यवसाय आदि से संबंधित विचारों के संचार की गति को तेज कर दिया । उनकी लेखनी से स्वतंत्रता एवं बंधुत्व की भावना का संचार हुआ जिसको प्राप्त करने की अभिलाषा हरेक व्यक्ति में थी ।

आर्थिक समस्या के समाधान हेतु राजा द्वारा एस्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाना पड़ा जिसकी कार्यवाही में गतिरोध पैदा हो गया लेकिन क्रान्तिकारियों ने राष्ट्रीय सभा बनाकर महत्वपूर्ण निर्णय लिए एवं अन्य सभाओं ने भी अपने कार्यों एवं लेखनी से फ्रांस में गणतंत्र की स्थापना करते हुए पुरातन व्यवस्था को धराशायी कर दिया ।

15.10 अभ्यास कार्य:-

- (I) फ्रांसिसी राज्य क्रान्ति के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों का वर्णन कीजिए ।
- (II) "फ्रांसिसी क्रान्ति से पूर्व फ्रांस में बौद्धिक क्रान्ति हुई थी ।" व्याख्या कीजिए ।
- (III) फ्रांसिसी क्रान्ति के परिणामों पर संक्षिप्त लेख लिखिये ।

15.11 संदर्भ अध्ययन सामग्री-

- (i) Hazen, C.D.: Modern Europe.
- (ii) केटलबी. सी. डी. एम., आधुनिक काल का इतिहास
- (iii) Illustrated World Encyclopedia pp. 652-655.
- (iv) Reader's Digest Library of Modern Knowledge pp 1173-1176.
- (v) The New Encyclopedia Britannica, pp. 978-979 Vol.14.
- (vi) Grant and Temporary: Europe in the 19th and 20th Centuries.
- (vii) Gooch, Brison. D.: Europe in the 19th Century.

इकाई-16

फ्रान्स की क्रान्ति का प्रभाव

इकाई की रूपरेखा

- 16.0 उद्देश्य
- 16.1 प्रस्तावना
- 16.2 फ्रान्स पर प्रभाव
 - 16.2.1 स्वेच्छाचारी व निरंकुश बूर्बो राजतन्त्र का अन्त
 - 16.2.2 सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव
 - 16.2.3 चर्च की सर्वोच्च स्थिति में गिरावट
 - 16.2.4 सामन्त वर्ग के महत्व की समाप्ति
 - 16.2.5 बुर्जुआ (मध्यम वर्ग) एवम् निम्न मध्यम वर्ग की दशा में सुधार
 - 16.2.6 बौद्धिक, वैचारिक व सांस्कृतिक प्रभाव
 - 16.2.7 न्याय व्यवस्था पर प्रभाव
 - 16.2.8 आर्थिक प्रभाव
 - 16.2.9 मानव अधिकारों की घोषणा
 - 16.2.10 प्रशासनिक एवं संवैधानिक सुधार
 - 16.2.11 लोक निर्माण कार्य
 - 16.2.12 हानिकारक प्रभाव
- 16.3 इंग्लैण्ड पर प्रभाव
 - 16.3.1 क्रान्ति का स्वागत
 - 16.3.2 क्रान्ति का विरोध
 - 16.3.3 पिट द्वारा इंग्लैण्ड में प्रतिक्रियावादी नीति का क्रियान्वयन
 - 16.3.4 व्हिग पार्टी में फूट
 - 16.3.5 आयरलैण्ड में राष्ट्रीय आंदोलन
 - 16.3.6 आंग्ल साहित्य पर प्रभाव
- 16.4 यूरोप पर प्रभाव
 - 16.4.1 अंधकारों के लिए संघर्ष का सूत्रपात
 - 16.4.2 क्रान्तिकारी युद्ध
 - 16.4.3 यूरोप में प्रतिक्रिया का युग
 - 16.4.4 सम्मेलनों का युग
 - 16.4.5 यूरोपीय साहित्य पर प्रभाव
- 16.5 विश्वव्यापी स्थाई प्रभाव
 - 16.5.1 स्वतन्त्रता की भावना

- 16.5.2 समानता
- 16.5.3 राष्ट्रीयता की भावना
- 16.5.4 प्रजातन्त्र की विचारधारा
- 16.5.5 बन्धुत्व
- 16.5.6 समाजवाद
- 16.5.7 शैक्षणिक क्षेत्र में परिवर्तन

16.6 सार समीक्षा

16.7 अभ्यास प्रश्न

16.8 संदर्भ ग्रन्थ

16.0 उद्देश्य

इस इकाई में 1789 ई० की फ्रान्स की महान राज्य क्रान्ति के प्रभावों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस इकाई का अध्ययन करके आप यह समझ सकेंगे कि :

1789 की फ्रान्स की महान राज्य क्रान्ति से फ्रान्स की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक व्यवस्था पर क्या परोक्ष अपरोक्ष प्रभाव पड़े?

फ्रान्स की सीमाओं को लांघ कर इस क्रान्ति ने इंग्लैण्ड व फिर समूचे यूरोप को किस रूप में व कितना प्रभावित किया ?

क्रान्ति के चिरस्थाई विश्वव्यापी प्रभाव क्या रहे जिन्होंने न केवल यूरोप वरन् सम्पूर्ण विश्व इतिहास को कतिपय नूतन आयाम दिये ?

16.1 प्रस्तावना

आधुनिक फ्रांस का इतिहास सन् 1789 ई. की महान फ्रांस क्रांति कही विकसित रूप है। इस क्रान्ति ने फ्रांस की राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक एवम् धार्मिक व्यवस्था को समग्र रूप से परिवर्तित कर दिया। वस्तुतः फ्रांस की राज्य क्रान्ति केवल मात्र एक राष्ट्रीय आंदोलन ही नहीं था वरन् इसके सिद्धान्तों यथा-स्वतन्त्रता, समानता, विश्व बन्धुता के नारों में सम्पूर्ण यूरोप को गुंजायमान कर दिया। इसलिये कहा गया है कि "यह एक अन्तर्राष्ट्रीय आंदोलन था जिसके उदय से फ्रांस का इतिहास यूरोप का इतिहास बन जाता है तथा फ्रांस का राष्ट्र नायक नेपोलियन यूरोप का नायक बन जाता है।" (देखें-जॉन हाल स्टीवर्ट: ए डॉक्यूमेंट्री सर्वे ऑफ दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन, पृ० 785) इसी संदर्भ में इस कहावत की प्रासंगिकता भी स्वतः सिद्ध होती दिखाई पड़ती है कि "यदि फ्रांस को जुकाम होता था तो सारा यूरोप छींकता था।" विशद् रूप से देखें तो स्पष्ट है कि फ्रांसिसियों ने जो रक्त बहाया वह मानवता के लिए था, उन्होंने जो कण्ट सहे वे सम्पूर्ण मानव जाति के लिए थे; उनके संघर्ष तथा उनके विचार जिन्होंने संसार की समूची व्यवस्था को झकझोर कर रख दिया, मानवता की विरासत हैं। ये सभी प्रयत्न फलीभूत हुए। इसी क्रान्ति ने विश्व को प्रजातंत्र, राष्ट्रीयता व समाजवाद की

भावना से प्रेरित किया। इस संदर्भ में यह अठारहवीं शताब्दी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी। इसके प्रभाव हमें आज भी दृष्टिगत होते हैं।

ठीक इसके विपरीत कुछ ऐसे भी इतिहासज्ञ हैं जो क्रान्ति के प्रभावों को नैराश्यपूर्ण व हानिकारक मानते हुए क्रान्ति को "एक भूल" तथा फ्रांस व यूरोप के लिए एक "बुरी वस्तु" के रूप में परिभाषित करते हैं। उनके आरोप हैं कि यह क्रान्ति प्रतिक्रियावादी, प्रजातन्त्र विरोधी और अप्रगतिशील थी। जबकि अन्य इतिहासकारों का मत है कि यह आधुनिक इतिहास में सबसे महान घटना थी, आधारभूत रूप से यह सबके लिए एक 'अच्छी वस्तु' थी और इसने आधुनिक यूरोप के उदारवाद, प्रजातान्त्रिक और प्रगतिशील जीवन की आधारशिला रखी है। (देखें- जॉन हॉल स्टीवर्ड: ए डॉक्यूमेंट्री सर्वे ऑफ दि फ्रेंच रिवोल्यूशन, पृ० 785) इस सम्बन्ध में दोनों ही पक्षों द्वारा युक्ति युक्त तर्क प्रस्तुत किए गये हैं जिनका विश्लेषण करके हम फ्रांस की क्रान्ति के प्रभावों का सही आंकलन करने का प्रयास करेंगे। फ्रांस की क्रान्ति के प्रभावों का उचित अध्ययन करने के लिए हम स्थूल रूप से इन्हें चार भागों में विभक्त कर सकते हैं:

- (1) फ्रांस पर प्रभाव
- (2) इंग्लैण्ड पर प्रभाव
- (3) सम्पूर्ण यूरोप पर प्रभाव
- (4) क्रान्ति के चिरस्थाई विश्वव्यापी प्रभाव

16.2 फ्रांस पर प्रभाव

1789 ई. की फ्रांस की क्रान्ति वस्तुतः फ्रांस की पुरातन व्यवस्था में व्याप्त विविध विकृतियों, विसंगतियों एवम् बुनियादी दोषों के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिक्रिया थी अतः इस क्रान्ति में मुख्य रूप से फ्रांस के ही राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवम् आर्थिक जीवन को प्रभावित किया। यह क्रान्ति पुरातन शासन व्यवस्था, असमानता पर आधारित फ्रांसिसी समाज, विलासितापूर्ण अन्य पादरी वर्ग तथा आर्थिक दिवालियापन के विरुद्ध एक सशक्त आंदोलन था, जिससे बुर्जुआ वंश के कुशासन का अन्त कर दिया तथा फ्रांस में प्रजातान्त्रिक शासन प्रणाली का मार्ग खोल दिया। फलतः फ्रांस में एक नवीन समाज का निर्माण प्रारम्भ हुआ। फ्रांस के जीवन पर इस क्रांति के निम्नलिखित प्रभाव पड़े:-

16.2.1 स्वेच्छाचारी व निरंकुश बूर्जो राजतन्त्र का अन्तः

यह क्रान्ति फ्रांस के बूर्जो राजवंश के स्वेच्छाचारी, निरंकुश व भ्रष्ट शासनतन्त्र को पूर्णतया हिला कर रख देने की दृष्टि से सफल रही जो पूर्णतया केन्द्रीकृत, अमर्यादित, भ्रष्ट और व्ययसाध्य था; जहाँ चर्च, सामन्त या कोई अन्य वर्ग ऐसा नहीं था जो राजा की स्वेच्छाचारी प्रवृत्तियों को नियन्त्रित करता। (देखें-ईश्वरी प्रसाद: क्रान्तिकारी यूरोप तथा नेपोलियन का युग, पृ० 28) बूर्जो शासक पूर्णतया स्वेच्छाचारी व निरंकुश थे। वे अपने आप को धरती पर ईश्वर का प्रतिनिधि समझते थे। जनता व जनहित की कोई परवाह नहीं करते थे। शासक के अत्यधिक केन्द्रीयकरण और पग पग पर राजकीय हस्तक्षेप से जनता को बड़ी

कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था । प्रशासन की दृष्टि से सारा फ्रांस 34 'इण्टेण्डेंसीज' (Intendancies) या 'जनरेलटीज' (Generalities) में विभक्त था जिनके प्रशासक सम्राट द्वारा नियुक्त 'इण्टेण्ट' कहलाते थे । फ्रांस के ये 34 इण्टेण्ट एक प्रकार से फ्रांस के 34 राजा थे जो केन्द्र में सम्राट के बाद प्रान्तों में अपने अमर्यादित आचरण और प्रशासनिक अत्याचारों से फ्रांसिसी जनता द्वारा घृणा की दृष्टि से देखे जाते थे ।

1789 ई. की क्रांति ने इस निरंकुश बूर्बो राजतन्त्र को मय इण्टेण्टों के जड़ से उखाड़ फेंका । सम्राट के साथ ही साथ इन इण्टेण्टों की निरंकुशता व स्वेच्छाचारिता का भी अन्त हुआ । 1791 ई. के संविधान के अनुसार लोगों की इच्छा व परमात्मा की कृपा से फ्रांस सम्राट को फ्रांसिसी लोगों का शासक घोषित किया गया । तत्पश्चात फ्रांस के किसी भी राजा ने दैवी अधिकारों का ढिंढोरा भी नहीं पीटा (दृष्टव्य-जे. हॉलैण्ड रोज: फ्रांस की राज्यक्रान्ति और नेपोलियन पृ० 176-220; सी.डी.एम. कैटलबी: ए हिस्ट्री ऑफ़ माडर्न टाईम्स, पृ० 33)

16.2.2 सामाजिक व्यवस्था पर प्रभाव:

इस क्रांति ने फ्रांस की उस सामाजिक व्यवस्था को भी तहस नहस कर दिया जो असमानताओं, विषमताओं, विशेषाधिकारों, विमुक्ति व रियायत पर आधारित था; जिस समाज में एक ओर ऐसा वर्ग था जो विशेषाधिकारों व अनेक मुखी सुविधाओं से समलंकृत था तो दूसरी ओर ऐसा वर्ग था जो इन सुविधाओं से सर्वथा वंचित उपेक्षा व विपन्नता का जीवन बिताता था । क्रांति ने इस सामाजिक वैषम्य की जड़ पर प्रहार किया व समाज नये सिरे से संरचित व गठित होता दिखाई दिया । (दृष्टव्य-लियो गर्शाय: दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन, पृ० 33-54; कोबान अल्फर: हिस्ट्री ऑफ़ फ्रेन्च रिवोल्यूशन, पृ० 18-22; लार्ड एक्टन: रिवोल्यूशनरी आईडियाज इन फ्रांस, पृ० 118)

16.2.4 चर्च की सर्वोच्च स्थिति में गिरावट:

इस क्रांति ने फ्रांस को चर्च की प्रभुता, अनावश्यक निरंकुशता, भ्रष्टाचार आदि से भी मुक्ति दिलाई । चर्च या पादरी वर्ग को फ्रांस की सामाजिक व्यवस्था में 'प्रथमइस्टेट' (वर्ग) माना जाता था । फ्रांस में इनकी संख्या 1 लाख 30 हजार के लगभग थी । इनमें भी समृद्ध व उच्च पादरी वर्ग ने तो तबाही मचा रखी थी । इनके हाथों में चर्च के उच्च पद व आय के अनन्त स्रोत थे । इनका धार्मिक कृत्यों से कोई सम्बन्ध नहीं था । सन्देह व नास्तिकता इनके जीवन के मूल मन्त्र थे । ये मठाधीश जानोयार्जन, धर्म प्रचार व जनकल्याण की अपेक्षा अपना समस्त समय राग रंग व आमोद-प्रमोद के भ्रष्ट कार्यों में लगाते थे । चर्च के पास समस्त देश की भूमि का पांचवा भाग था । इस आय के अतिरिक्त चर्च को भेंट, उपहार व किसानों से मिलने वाले सामन्ती करों के रूप में भी अगणित आय होती थी जबकि इन्हें कर के रूप में राज्य को कुछ भी नहीं देना पड़ता था । चर्च अन्ध विश्वास व पाखण्डवाद का अड्डा बना हुआ था । क्रांति ने चर्च की इस विशिष्ट स्थिति को समाप्त कर दिया । राज्य द्वारा चर्च की भूमि,

सम्पत्ति अधिग्रहित कर चर्च को मर्यादित जीवन व्यतीत करने व अपने कर्तव्य पालन के प्रति सचेष्ट होने को विवश किया गया । जनता को लगा कि चर्च अब उनका दमन करने की स्थिति में नहीं रह गया है । फ्रांस में उच्च पादरियों का प्रभाव बहुत कम हो गया । अनेक तो देश छोड़ कर भाग गये । जो रह गये उन्हें राज्य व संविधान के प्रति स्वामीभक्त बने रहने की शपथ लेनी पड़ी । चर्च के अधिकारी सरकार के अधिकारी बन गये व अब उन्हें अनन्त आय की जगह सरकार से निश्चित वेतन मिलने लगा था । इससे भी वे संयमित जीवन यापन को विवश हो गये । चर्च का दर्जा राज्य से नीचा हो गया । फ्रांस में पोप का प्रभाव, भी कम हो गया । पादरियों की विलासिता में कमी आई । कैथोलिक चर्च के अतिरिक्त अन्य धर्मानुयायियों को भी धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की गई । क्रान्ति ने लोगों में धर्म की भावना को भी कम कर दिया । कट्टर क्रान्तिकारी धर्म के स्थान पर बुद्धि एवम् तर्क की पूजा (Worship of Reason) को अधिक महत्व देने लगे । (दृष्टव्य- मादलाँ: फेच रिवोल्यूशन, पृ० 175 ; लियो गर्शाय: दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन, पृ० 33; केटल्बी: ए हिस्ट्री ऑफ़ माडर्न टाईम्स, पृ० 148)

16.2.4 सामन्त वर्ग के महत्व की समाप्ति:

क्रान्ति पूर्व फ्रांस में सामन्त वर्ग बड़ा प्रभावशाली था । इन्हें 'द्वितीय इस्टेट' (वर्ग) का दर्जा प्राप्त था । प्रो. गर्शाय के शब्दों में- "यह समाज का दूसरा समृद्ध वर्ग था जिसके पास सुख समृद्धि के प्रचुर साधन थे और अगणित विशेषाधिकार व सुविधाएँ थीं । शासन, सेना व चर्च के उच्चतम पद इन्हीं के हाथों में थे । (गर्शाय: दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन, पृ. 36) वे प्रत्यक्ष कर से मुक्त थे । कृषकों से उन्हें अनेक प्रकार के कर, शुल्क व बेगार मिलती थी । डॉ० ईश्वरी प्रसाद लिखते हैं कि "राज्य" चर्च व सामन्तों को कृषकों द्वारा दिये गये करों और देयों के अतिरिक्त अनेक ऐसे कार्य करने पड़ते थे जो सामन्तों के अधिकार थे और कृषकों के कर्तव्य । उदाहरण के लिए कृषकों से पथ-निर्माण इत्यादि के लिए बलात श्रम लिया जाता था । यह अधिकार 'कावी' (Corvee Seingneuriale) कहलाता था । यहीं नहीं, कृषक अपने जमींदार की चक्की पर अपना आटा पिसवाने, उसके तन्दूर पर अपनी रोटी सिकवाने, मांस के लिए जमींदार के बूचड़खाने में पशुओं का वध कराने, जमींदार के कोल्हू पर जैतून का तेल निकलवाने उसकी भट्टी में शराब बनवाने, के लिए और भेजने के लिए बाध्य थे । कुलीनों या सामन्तों के ये अधिकार 'बेनातिरीज' (Banatities) कहलाते थे । इन सब कार्यों के लिए किसानों को शुल्क के रूप में काफी पैसा देना पड़ता था और इन कार्यों के लिए प्रायः कई मील दूर जाना पड़ता था" (ईश्वरी प्रसाद: क्रान्तिकारी यूरोप तथा नेपोलियन का युग, पृ० 34-35) अपनी परम्परागत अयोग्यता और प्रशासन के प्रति उदासीनता के कारण उनकी राजनीतिक शक्ति काफी हद तक समाप्त हो चुकी थी । इसके बावजूद वे स्वयं अथवा अपने कारिन्दों के माध्यम से किसानों का शोषण करने, उन्हें यातनाएँ देने व तिरस्कृत करने के लिए मुक्त थे । क्रान्ति ने इस सामन्त वर्ग की तानाशाही का जडोन्मूलन कर दिया । क्रान्ति के दौरान क्रान्तिकारियों ने सामन्त वर्ग के सदस्यों को बहुत क्षति पहुँचाई । इनके गढ़-गढियों पर आक्रमण किए गए । उन्हें ध्वस्त किया गया इनकी धनसम्पत्ति भी, छीन लेने के कार्य भी किए

गये । कुछ सामन्त क्रान्तिकारियों के हाथों दुर्दशा के शिकार बने व कुछ काल के ग्रास । कुछ सामन्त तो अपने सम्मान व प्राणों की रक्षा के लिए फ्रांस को छोड़ कर विदेशों को भाग गये । जनसाधारण को सामन्त वर्ग के शोषण व अत्याचार से मुक्ति मिली व सामाजिक वैषम्य का अन्त हुआ । क्रान्ति ने इनकी विशिष्ट स्थिति एवम् 'कार्वी', 'बेनातिरीज' जैसे व अन्य विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया । (दृष्टव्य-सी.जे.एच हेज एण्ड वी थामस मून: माडर्न हिस्ट्री, पृ० 297; सी.डी. हेजन: माडर्न यूरोप अप टू 1945, पृ० 103-04 हर्नशा: मेन करैन्ट्स ऑफ यूरोपियन हिस्ट्री, पृ० 42)

16.2.5 बुर्जुआ (मध्यम वर्ग) व निम्न मध्यम वर्ग की दशा में सुधार:

यह फ्रांस के समाज का जनसाधारण वर्ग था । इसे ही 'तृतीय इस्टेट' कहा जाता था । यह वर्ग विशेषाधिकारों व सुविधाओं से वंचित था । इस वर्ग के लोगों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है- प्रथमतः उच्च मध्यम वर्ग के लोग या 'बुर्जुआ' तथा द्वितीय: शिल्पी कृषक व श्रमिक गण जिन्हें 'पेटी बुर्जुआ' या निम्न मध्यम वर्ग की संज्ञा दी गई थी । फ्रांस की कुल जनसंख्या का 99 प्रतिशत भाग इसी तृतीय वर्ग का था । बुर्जुआ या उच्च मध्यम वर्ग में व्यापारी, साहूकार, उद्योगपति, शिक्षक, डॉक्टर, वकील इत्यादि आते थे । सम्पत्ति, शिक्षा, योग्यता व संस्कृति में श्रेष्ठता के उपरान्त भी यह वर्ग सामन्तों, की भांति राज-शासन व सुविधाएँ प्राप्त नहीं था । उच्च पदों के द्वारा इनके लिए बन्द थे । अनेक अक्सरों पर इन्हें सामन्तों द्वारा तिरस्कृत व अपमानित होना पड़ता था । इस सामाजिक अब मानना के अतिरिक्त इन्हें कतिपय व्यावसायिक कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ता था । सम्राट व सामन्तों की तरफ से इनके व्यापार व्यवसाय पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध तथा अनावश्यक नियन्त्रण व अंकुश थे । इसी बुर्जुआ वर्ग का क्रान्ति में सर्वाधिक हाथ रहा । क्रान्ति पूर्व फ्रांस के अधिकांश विचारक, लेखक, दार्शनिक, मनीषी व नायक इसी वर्ग से थे एवम् घुटन महसूस करते थे।

तृतीय इस्टेट का निम्नतर वर्ग शिल्पी, कृषक और कृषि-श्रमिकों का था । मशीनों के प्रयोग ने शिल्पी वर्ग की दशा सोचनीय बना रखी थी । कृषक वर्ग सर्वाधिक उपेक्षित, दरिद्र, विपन्न व त्रस्त था । अधिकांश कृषक भूमिहीन थे व कृषक दास का जीवन बिता रहे थे । गर्शाय लिखता है कि- "खेती का प्रत्येक कार्य यथा बुआई, जुताई, फसल की कटाई, उत्पादन का स्थानान्तरण, बिक्री आदि सभी पर सरकार का पूरा नियन्त्रण था व कृषक निरा निस्सहाय था" (गर्शाय-दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन, पृ० 50;) रेन के अनुसार "एक कृषक अपनी आय के 100 फ्रैन्क, में से 53 फ्रैन्क कर के रूप में राज्य को दे देता था, 14 अपने सामन्त को देता था और 14 अपने चर्च को देता था । बचे हुए 19 फ्रैन्क से वह कर-संग्रहकों को देता व अपना पेट पालता था । इस प्रकार उसे अपनी आय के 80 प्रतिशत से भी अधिक कर के रूप में ही दे देना पड़ता था । (रेन: ऑरिजन डी-ला-फ्रांस-कॉण्टेस्पोरेयर (एल 'आंशिया रिजीम'); इश्वरी प्रसाद- क्रान्तिकारी यूरोप तथा नेपोलियन का युग, पृ. 34 से उद्धृत) किसानों को 'कार्वी'

(किसानों से लिया जाने वाला बलात् श्रम) और बेनातिरीज (सामन्तों को किसानों से अनेक प्रकार के शुल्क प्राप्त करने विषयक विशेषाधिकार) इत्यादि के कारण भी काफी कष्ट भुगतने पड़ते थे ।

क्रान्ति ने सर्वाधिक राहत इसी वर्ग को पहुँचाई । अब इन्हें अपनी योग्यता के अनुरूप शासन व उच्च पदों में भागीदारी प्राप्त करने का समान अधिकार प्राप्त हो सका । इन्हें सामन्तों के तिरस्कार व अपमान से भी मुक्ति मिली । राजा चर्च व सामन्तों के अनावश्यक बन्धनों से ये मुक्त हो गये । व्यापार-व्यवसाय पर लगे अनावश्यक प्रतिबन्ध हट गये । फलतः यह वर्ग लाभान्वित हुआ । भूमिहीन कृषकों व कृषि दासों की स्थिति सुधरी व राज्य द्वारा इन्हें जीविकोपार्जन हेतु भूमि भी दी गई । अनेक अनावश्यक कर हट गये व करों में समानता आने से इस वर्ग के लोगों ने राहत की सांस ली । कृषकों को 'कार्वो' व बेनातिरोन रूपी शोषण से मुक्ति मिली फलतः वह अपने जीविकोपार्जन हेतु अधिक बचा पाने की स्थिति प्राप्त कर सका जिससे अंततोगत्वा उसके जीवन स्तर में सुधार का मार्ग प्रशस्त हुआ । (दृष्टव्य- लियो गर्शायः दि फ्रेंच रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन पृ. 54; सी.डी.एम कैटलबी: ए हिस्ट्री ऑफ़ माडर्न टाईम्स, पृ. 33-34, डेविड थोमसन: यूरोप सिन्स नेपोलियन, पृ. 25, 26)

16.2.6 बौद्धिक, वैचारिक व सांस्कृतिक प्रभावः

फ्रांस के विविध प्रबुद्धवादियों ने अपने विवेकवाद, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण और मानववादी अवधारणा को अपने लेखन व विचार शैली का आधार बना कर तत्कालीन फ्रांस की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक विकृतियों पर प्रहार करते हुए साहित्य, समाज, राजनीति, विज्ञान इत्यादि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण क्रान्तिकारी विचारों को अभिव्यक्त किया । इनमें माण्टेस्क्यू (1689-1755 ई.) वॉल्टेयर (1694-1778 ई.), रूसो (1712-1778 ई.) तथा फिजियोक्रेट्स (आर्थिक विचारक जैसे-फ्रांकाय क्वेने, जीन द गूर्ने, मर्सियर द ला रेवियर, जेक्स त्यूरगो, ड्यूपान्ट द नेमर्स आदि) के नाम उल्लेखनीय हैं । इन विचारकों ने सशस्त्र राज्य क्रान्ति को एक दर्शन देकर, उसे बौद्धिक सामग्री प्रदान कर जो नैतिक बल प्रदान किया उससे फ्रांस के बौद्धिक विकास में क्रान्तिकारी परिवर्तन आए । क्रान्ति ने समूचे फ्रांस में अदभूत बौद्धिक चेतना का प्रवाह कर दिया एवम् फ्रांसिसियों का नैतिक बल उत्तरोत्तर बढ़ा । भाषण, लेखन, प्रकाशन की स्वतन्त्रता प्राप्त हुई । क्रान्तिकारी साहित्य की रचना हुई । तर्क को रुढ़ियों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाने लगा । अनेक स्कूल, विज्ञान, गणित, मैडीकल शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, शारीरिक शिक्षा व विविध समाज विज्ञानों के अध्ययन, अध्यापन व अनुसन्धान का कार्य किया जाने लगा । इन समस्त बातों का रचनात्मक परिणाम यह निकला कि फ्रांसिसियों का बौद्धिक विकास हुआ और वे जीवन के प्रति प्रगतिशील व उदारवादी बने । (दृष्टव्य- कैटलबी: हिस्ट्री ऑफ़ माडर्न टाईम्स पृ. 33, 36; गर्शायः पूर्व पृ. 273; डेविड थोमसन: यूरोप सिन्स नेपोलियन, पृ. 24; एलन. जार्ज. एच.: फ्रेंच रिवोल्यूशन, वोल्यूम 1, पृ. 133-34)

16.2.7 न्याय व्यवस्था पर प्रभाव:

इस क्रांति ने फ्रांस की उस दोषपूर्ण न्यायिक व्यवस्था को भी नष्ट भ्रष्ट कर दिया जो अत्यन्त भ्रष्ट व विश्रंखलित थी; जिसमें एकरूपता नहीं थी; जिसमें कानूनों की कोई प्रमाणिक संहिता नहीं थी; जिसमें लगभग 400 प्रकार के कानून प्रचलन में थे; जिसके अन्तर्गत न्यायालयों के क्षेत्राधिकार अस्पष्ट व अव्यवस्थित थे; न्यायालय भी जिसमें अनेक प्रकार के होते थे और जिनके न्यायधीशों के पद बिका करते थे वे भी प्राय वंशानुगत आधार पर और जिस न्यायिक व्यवस्था में 'लैटर्स द काशे' (Letters de Cachet) जैसी निन्दनीय प्रथा प्रचलित थी । क्रान्ति ने प्रचलित भ्रष्ट न्यायिक व्यवस्था का अन्त कर दिया और सम्पूर्ण फ्रांस के लिए एक सी न्याय व्यवस्था का निर्माण हुआ । कानूनों का संग्रह कर दिया गया । 'लैटर्स द काशे' जैसी कुप्रथा समाप्त कर दी गई । इस सम्बन्ध में नेपोलियन ने उल्लेखनीय कार्य और न्यायिक क्षेत्र में कतिपय नूतन आयाम स्थापित किए । (दृष्टव्य- साल्वेमिनी: दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन, पृ. 34; जे. हॉलैंड रोज: फ्रांस की राज्य क्रांति और नेपोलियन, पृ. 105)

16.2.8 आर्थिक प्रभाव:

क्रांतिकारी फ्रांस की आर्थिक व्यवस्था अत्यन्त जर्जरित, जटिल व बोझिल थी । जनसाधारण व कृषक वर्ग की दशा सोचनीय थी । रूस्टन लिखता है कि - "इस समय अधिकांश किसानों को पेट भर भोजन नहीं मिल पाता था । नमक बहुत ही महंगा था, मांस व मदिरा का आहार सबके लिए सुगम नहीं था । शीतकाल में भी वे चीचड़ों से लिपटे रहते थे । उनके रहने के स्थान कच्चे, प्रकाश व वायु से रहित थे ।" (एम.रूस्टन: दि पायोनियर्स ऑफ दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन) इधर कृषक वर्ग की यह दशा थी तो उधर सरकार में आर्थिक गठन व नीति के क्षेत्र में भयंकर शिथिलताएँ थीं । जनसाधारण पर करों का असहम बोझ था । उच्च विशेषाधिकार या सुविधालंकृत वर्ग करों के दायित्व से एक प्रकार से मुक्त ही था । कर संग्रह की पद्धति भी अत्यन्त व्ययसाध्य, भ्रष्ट व असंतोषजनक थी । किसानों को कई अनावश्यक कर देने पड़ते थे । जैसे 'गैबेल' नमक कर का पर्याय था । यह अत्यन्त ही अनैतिक, व कष्टकारक कर था । वास्तव में नमक की बिक्री का एकाधिपत्य सरकार ने एक कम्पनी को दे रखा था और प्रत्येक व्यक्ति को एक निश्चित परिमाण में नमक खरीदना आवश्यक था । कम्पनी नमक का मनमाना दाम निश्चित कर देती थी । इधर जो व्यक्ति निश्चित परिमाण में नमक खरीदने में असमर्थ होता था वह राज्य की ओर से दण्ड पाता था । प्रो० हेजन ने लिखा है कि- "नमक के अवैध व्यापार के लिए प्रतिवर्ष 30,000 व्यक्तियों को कारावास और 500 व्यक्तियों को मृत्युदण्ड मिलता था ।" (हेजन दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन, वोल्यूम I, पृ. 70) दूसरी ओर राज परिवार अपनी शान शौकत व अपव्ययता पर पानी की तरह धन बहा रहा था । राज्यकोष रिक्त था । 1789 ई. में क्रान्ति प्रारम्भ होने से पूर्व फ्रांस पर 400 करोड़ पौण्ड का राजकीय ऋण था जिस पर 23 करोड़ 60 लाख पौंड वार्षिक सूद देय था । सूद की यह राशि राज्य की कुल आय से कुछ ही कम थी । (ईश्वरी प्रसाद: क्रांतिकारी यूरोप व नेपोलियन का युग, पृ. 37)

क्रांति ने फ्रांस के आर्थिक जीवन को आद्योपान्त परिवर्तित कर दिया । किसानों व जनसाधारण के आर्थिक जीवन स्तर को सुधारने हेतु कई प्रयास किए गए । अनावश्यक व अनुचित कर समाप्त कर दिये गये । 'गैबल' जैसे कष्टकारी अनैतिक करों को समाप्त कर करों के क्षेत्र में समानता स्थापित की गई । करों का भार अब सारी जनता पर समान रूप से फैल गया । राज्य की अर्थव्यवस्था को सम्बल प्रदान करने के लिए कई कदम उठाए गए । पत्र मुद्रा प्रचलित की गई । गिल्ड सिस्टम के कट्टर नियमों का अन्त कर दिया गया । प्रवासी जमींदारों की जमीनें सरकार द्वारा अधिग्रहित करके जरूरतमन्द किसानों को सस्ते दामों पर दे दी गई । चर्च की असीमित सम्पत्ति पर अधिकार करके भी सरकार ने उससे सम्पूर्ण जनता को लाभ पहुँचाया । राजदरबार की फिजूलखर्ची का अन्त हो गया । सम्पूर्ण फ्रांस में दशमलव प्रणाली पर आधारित नाप-तौल के पैमाने चालू किए गये । पैरिस में बैंक ऑफ फ्रांस की स्थापना की गई । असंख्य चुंगी घर समाप्त कर दिए गए, जो व्यापार-रुष्टि के विकास में बाधक थे । इस प्रकार क्रान्ति के फलस्वरूप फ्रांस में अनेक क्रान्तिकारी आर्थिक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए । (दृष्टव्य-हंज एण्ड पी. थामस मून: माडर्न हिस्ट्री पृ० 297-98)

16.2.9 मानव अधिकारों की घोषणा:

क्रान्तिकारियों ने क्रांति की सफलता के उपरान्त मनुष्य के नैसर्गिक, अपरिवर्तनीय और पवित्र अधिकारों की घोषणा करना अनिवार्य माना ताकि शासनतन्त्र के सूत्रधार अपने अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति सचेष्ट रह सकें । इनकी आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए इतिहासज्ञ हेंजन लिखते हैं कि- "चूंकि फ्रांस में स्वतन्त्रता के सिद्धान्तों की ऐतिहासिक परम्परा नहीं थी अतः संविधान की आधारशिला के रूप में इसका होना अत्यावश्यक था ।" रूसो की कृति 'सामाजिक संविदा' पर आधारित इस घोषणा के प्रारूप में कुल 17 अनुच्छेद थे । इसमें कहा गया था कि मनुष्य स्वतन्त्र व समान है जनता ही प्रभु है, कानून जन इच्छा की अभिव्यक्ति है, और इनके निर्माण हेतु जनता को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपने प्रतिनिधियों द्वारा भाग लेने का अधिकार है और अधिकारी गण उसी सत्ता का उपभोग कर सकते हैं जो कानून द्वारा निश्चित रूप से उन्हें दे दी जाती है । इसके अतिरिक्त विविध स्वतन्त्रताओं का भी उल्लेख किया गया जैसे: वैयक्तिक स्वतन्त्रता, भाषण व विचाराभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, सम्पत्ति, सुरक्षा व अत्याचार के विरोध की स्वतन्त्रता आदि । सारांश में यह घोषणा स्वतन्त्रता, समानता व जनता के प्रभुत्व की घोषणा थी जो सम्पूर्ण मनुष्य मात्र के लिए, सभी कालों के लिए, प्रत्येक देश के लिए और सारे संसार' के लिए उदाहरण स्वरूप थी और समस्त संसार में लागू की जा सकती थी । लियो गर्शाय लिखते हैं कि- "यह घोषणा पुरातन व्यवस्था की मृत्यु का प्रमाण पत्र थी और फ्रांस के लिए एक नवीन जीवन की आशा थी ।" (गर्शाय: दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन, पृ. 125) ग्राण्ट एण्ड टैम्परली: इसके महत्व का मूल्यांकन करते हुए लिखते हैं कि- "आधुनिक राज्य व्यवस्था भी इससे प्रभावित हुई । बाद के वर्षों के लिए यह एक उदारता का चार्टर बन गया । जब कभी किसी देश में लोग मानव अधिकारों की चर्चा करते हैं तो उन्हें फ्रांस की इस घोषणा का स्मरण हो आता है ।" (ग्राण्ट एण्ड टैम्परली: यूरोप इन दि नाइन्टीय एण्ड

ट्वन्टीपथ सैन्यू रीज, पृ. 24) हैनरी लिटल फील्ड सीखे इतिहासजों ने तो इस घोषणा की तुलना ग्रेट ब्रिटेन के मैग्नाकार्टा (1215 ई.), बिल ऑफ राईट्स (1688 ई.), अमेरीका की स्वतन्त्रता घोषणा (1776 ई.) आदि से करते हुए इसे यूरोपीय इतिहास की एक मूल्यवान निधि बताया है। (दृष्टव्य-हैनरी लिटल फील्ड हिस्ट्री ऑफ यूरोप, पृ. 105)

16.2.10 प्रशासनिक व संवैधानिक सुधार:

फ्रांस की पुरातन शासन व्यवस्था जीर्ण-शीर्ण एवम् दोषपूर्ण थी जिसके पुनर्गठन व सम्पूर्ण साम्राज्य के प्रशासन में सुव्यवस्था व एकरूपता लाने के लिए क्रान्ति की सफलता के उपरान्त राष्ट्रीय संविधान सभा द्वारा कई कार्य किये गये। सम्पूर्ण फ्रांस को 83 विभागों (Departments) में विभक्त किया गया। पुराने इण्टेडेण्टों को समाप्त करके उन्हें 374 जिलों (Cantons) में विभक्त कर इन 'जिलों' को 44,000 कम्यूनो (Communes) में बाँट दिया गया। कम्यूनो को पूर्ण स्वायत्तता प्रदान कर दी गई। नये कैंटोनों व कम्यूनो में प्रान्तीय व स्थानीय कौन्सिल्स का गठन किया गया जिनमें जन निर्वाचित प्रतिनिधि रखे गये। इस प्रकार के प्रशासनिक सुधारों ने फ्रांस में प्रशासनिक सुव्यवस्था और सजा के विकेन्द्रीकरण को सम्भव बनाया व शासन पर राजा का प्रत्यक्ष प्रभाव समाप्त प्रायः सा हो गया। 1791 के संविधान द्वारा जहाँ फ्रांस में संवैधानिक राजतन्त्र की स्थापना, एक सदन वाली व्यवस्थापिका का गठन आदि किया गया वहीं 1795 ई. में एक नवीन संविधान द्वारा फ्रांस में प्रथम गणतन्त्र की स्थापना की गई। प्रशासनिक व संवैधानिक सुधारों की दृष्टि से ये उपलब्धियाँ फ्रांस के लिए अच्छे संकेत थे। (दृष्टव्य-लियो गर्शायः दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन, पृ. 148)

16.2.11 लोक निर्माण कार्य:

क्रान्ति काल में प्रशासन ने अनेक लोक निर्माण कार्यों की और भी ध्यान दिया। निर्धन व भूमिहीन कृषकों को सस्ती दरों पर भूमि वितरित की गई। कृषि उत्पादन के साधनों का वर्गीकरण किया गया, फसलों के लिए कृत्रिम जल सिंचवाई के साधनों का विकास किया गया। दलदली व गैर कृषि योग्य भूमि को साफ करा कर कृषि योग्य भूमि का विस्तार किया गया। इसी प्रकार व्यापार-वाणिज्य को प्रोत्साहन देने के लिए आवागमन के साधनों का विकास किया गया।

16.2.12 क्रान्ति के हानिकारक प्रभाव:

जहाँ क्रान्ति के अनेक लाभदायक प्रभाव परिलक्षित हुए वहाँ दूसरी ओर क्रान्ति के कतिपय कुप्रभाव भी दृष्टिगोचर हुए। इन्हीं कुप्रभावों को आधार बना कर कुछ इतिहासकारों ने क्रान्ति की आलोचना की है और इसे प्रतिक्रियावादी प्रजातन्त्र विरोधी, अप्रगतिशील आदि कह कर इसकी भर्त्सना की है। स्थूल रूप से क्रान्ति के मुख्य कुप्रभाव निम्नलिखित रहे:-

(i) क्रान्ति के दौरान फ्रांस में जनसाधारण को अनेकानेक कष्ट व परेशानियों झेलनी पड़ी। असंख्य लोग मृत्यु की गोद में सुला दिए गये। रक्तपात ने फ्रांस की धरती को रक्त रंजित

कर दिया । सामन्तों, जमींदारों के भवनों, गढ़ों आदि को आग लगा दी गई, फसलें नष्ट कर दी गई । व्यापार उद्योग-धन्धों को भी क्षति पहुंची । फ्रांसिसियों के आर्थिक कष्टों में बढ़ोतरी हुई । 'आतंक का राज्य' के दौरान असंख्य निरपराध लोगों को 'गिलोटिन' कर दिया गया । सर्वत्र जन-धन की व्यापक क्षति हुई ।

(ii) लम्बे समय तक फ्रांस में अशान्ती, अव्यवस्था एवम् आराजकता का बोलबाला रहा ।

(iii) विदेशी प्रतिक्रियावादी राज्यों द्वारा फ्रांस की क्रान्ति का अंत करने के लिए युद्ध छेड़ दिए गये । ये युद्ध लगभग 23 वर्षों तक चलते रहे । इनसे फ्रांस के आर्थिक विकास पर प्रतिकूल असर पड़ा ।

(iv) क्रान्तिकारी फ्रांस को कोई चिरस्थायी संविधान दे पाने में असफल रहे ।

(v) प्रजातन्त्र के आदर्श को पूर्णतः कभी भी क्रियान्वित नहीं किया गया । 'आतंक का राज्य' के दौरान तो प्रजातन्त्र व न्याय को ताक पर रख दिया गया ।

(vi) मानव अधिकारों की घोषणा ने जनसाधारण में अपने अधिकारों के प्रति तो जागरूकता पैदा कर दी किन्तु, 'उन्हें कर्तव्य बोध कराने का रंच मात्र भी प्रयास नहीं किया गया ।

(vii) यद्यपि सामाजिक वैषम्य दूर करने के कई सार्थक प्रयास किए गये थे किन्तु, इनमें से कोई भी प्रयास जन साधारण में जाति व वर्ग भेद की दरार को पूर्णतः न मिटा सका।

उपर्युक्त कुप्रभावों या विसंगतियों के बावजूद 1789 ई. की महान राज्य क्रान्ति ने फ्रांसिसियों को एक नयी जीवन शैली । चिन्तन व कार्य दिशा प्रदान की । यद्यपि सब कुछ पूर्णतया नहीं बदला जा सका तथापि इस दिशा में ठोस व काफी हद तक सफल प्रयास किये गये व परिवर्तन के सिद्धान्त की सार्थकता को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया । कतिपय कुप्रभावों के बावजूद स्वतन्त्रता, समानता के साये में गैस विकास व उज्ज्वल भविष्य के नूतन पथ पर अग्रसर होता दिखाई दिया ।

16.3 इंग्लैण्ड पर प्रभाव

16.3.1 क्रान्ति का स्वागत:

प्रारम्भ में इंग्लैण्ड में फ्रांस की 1789 ई. की क्रान्ति का खुले हृदय से स्वागत किया गया। इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री पिट दी मंगर (Pitt the Younger) भी क्रान्ति के प्रति सहानुभूति रखते थे । इंग्लैण्ड की प्रजा ने इस क्रान्ति का मुक्त हृदय से स्वागत इस कारण भी किया चूंकि उनका ऐसा मानना था कि इस क्रान्ति के फलस्वरूप फ्रांस में भी इंग्लैण्ड जैसा प्रजातंत्र स्थापित हो जायेगा व जनता को लोकतान्त्रिक अधिकार प्राप्त होंगे । वर्डजवर्थ (Wordsworth) और कौलरिज (Coleridge) जैसे महाकवियों ने इस क्रान्ति में नवीन युग का सूत्रपात अनुभव किया एवम् अपनी प्रसन्नता अनुभव की । प्रगतिशील, उदारहृदय पादरियों में क्रान्ति के पक्ष में जनमत तैयार किया व तद्विषयक प्रचार भी किया, । बिहगों ने इसकी तुलना 1688 ई० की शानदार क्रान्ति (Glorious Revolution) से करते हुए इसे उससे मिलती जुलती क्रान्ति

बताया । दृष्टव्य- वार्नर, मार्टिन एण्ड मयूर: दि न्यू ग्राउन्ड वर्क ऑफ ब्रिटिश हिस्ट्री, पृ. 671-72)

16.3.2 क्रान्ति का विरोध:

परन्तु, जैसे-जैसे क्रान्ति का स्वरूप उग्र होता चला गया और हिंसा प्रमुख तत्व के रूप में उभरती दिखाई दी, इंग्लैण्ड ने इसका विरोध करना शुरू कर दिया । सितम्बर हत्याकाण्ड, आतंक का राज्य, सम्राट व सम्राज्ञी का वध आदि कतिपय ऐसी घटनाएँ थीं । जिन्होंने शीघ्र ही क्रान्ति के प्रति इंग्लैण्ड का मोह भंग कर दिया । इंग्लैण्ड इस बात से आशंकित होने लगा कि कहीं फ्रांस की इस हिंसात्मक क्रान्ति का प्रभाव इंग्लैण्ड के संवैधानिक राजतन्त्र को क्षत विक्षत न कर दे । इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री पिट ने भी अब क्रान्ति की खुली आलोचना शुरू कर दी । अगले ही वर्ष सन् 1790 ई. इंग्लैण्ड के एक व्हिग नेता बर्क ने 'Reflections on the French Revolution' नामक पुस्तक लिख कर फ्रांस की क्रान्ति की तीखी आलोचना कर डाली । उसने यह निष्कर्ष निकाला कि फ्रांसिसी क्रान्ति का परिणाम होगा- "अव्यवस्था और आराजकता ।" (दृष्टव्य-वर्क: रिफ्लेक्शन ऑन दि फ्रेंच रिवोल्यूशन, प्राक्वथन)

16.3.3 पिट द्वारा इंग्लैण्ड में प्रतिक्रियावादी नीति का क्रियान्वयन:

प्रधानमन्त्री पिट ने इंग्लैण्ड में इस क्रान्ति के प्रभाव को अंकुशित और नियन्त्रित करने के लिए प्रतिक्रियावादी नीति को कार्यान्वित किया । उसने समाचारपत्रों की स्वतन्त्रता, राजनीतिक सभाओं और भाषणों आदि पर प्रतिबन्ध लगा दिये । संदिग्ध विदेशियों पर कड़ी निगाह रखी जाने लगी । सभी प्रकार के राजनीतिक व संवैधानिक सुधारों को कुछ काल के लिए स्थगित कर दिया गया । मजदूरों द्वारा संगठन का निर्माण करना भी प्रतिबन्धित कर दिया गया । इन सभी प्रतिबन्धों के बावजूद भी क्रान्ति की भावनाओं से उत्प्रेरित होकर इंग्लैण्ड की जनता संसदीय सुधारों की मांग को लेकर आंदोलन करती रही ।

16.3.4 डिग पार्टी में फूट

क्रान्ति का एक कुप्रभाव इंग्लैण्ड की राजनीति पर यह दृष्टिगोचर हुआ कि इंग्लैण्ड के एक प्रमुख राजनीतिक दल व्हिग पार्टी में फूट पड़ गई । इस पार्टी का एक मुख्य नेता फॉक्स क्रान्ति का समर्थक था और दूसरा नेता वर्क इसका कट्टर विरोधी था । इसलिए उनमें संवैधानिक मतभेद उत्पन्न हो गया । परिणामतः इस फूट से व्हिग पार्टी पूर्वापेक्षा दुर्बल हो गई ।

16.3.5 आयरलैण्ड में राष्ट्रीय आंदोलन:

फ्रांस की क्रान्ति ने इंग्लैण्ड के प्रभुत्व वाले आयरलैण्ड की आयरिश प्रजा में राष्ट्रीयता की भावना को जगा दिया । इंग्लैण्ड के प्रभुत्व से अपने आपको स्वतन्त्र कराने के लिए आयरिश लोगों ने ब्रिटेन के विरुद्ध स्वतन्त्रता आंदोलन छेड़ दिया । क्रान्ति की सफलता से उत्साहित फ्रांस आयरिश लोगों को न केवल इस हेतु उकसा रहा था वरन् वह उन्हें सहायता भी

दे रहा था । वस्तुतः आयरिश स्वतन्त्रता संग्राम का मूल प्रेरणा स्रोत फ्रांस की सन् 1789 ई० की क्रान्ति ही थी ।

16.3.6 आंग्ल साहित्य पर प्रभाव:

इस क्रान्ति ने आंग्ल भाषा के साहित्य को भी परोक्ष-अपरोक्ष में खूब प्रभावित किया । क्रान्ति के पक्ष और विपक्ष में प्रचुर मात्रा में साहित्य रचा गया । कूपर, वर्डजवर्थ, कौलरिज, शैली और बायरन आदि कवियों के साहित्य पर क्रान्ति का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । इस दृष्टि से वर्क द्वारा लिखित 'रिप्लैक्शन्स ऑन फ्रेन्च रिवोल्यूशन' पेन रचित 'राइट्स ऑफ मैन' और सदे द्वारा रची गई 'लाईक ऑफ नेल्शन' आदि कृतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

16.4 सम्पूर्ण यूरोप पर प्रभाव

इस क्रान्ति के प्रभाव मात्र फ्रांस या इंग्लैण्ड तक ही सीमित नहीं रहे वरन् अतिशीघ्र ही समग्र यूरोप भी इस क्रान्ति की लहर से प्रभावित होता दिखाई दिया । इस संदर्भ में हैनरी लिटल फील्ड ने ठीक ही लिखा है कि- "यह एक सम्पूर्ण यूरोपीय आंदोलन था जो फ्रांस में आरम्भ हुआ तथा नेपोलियन के काल में यूरोप में फैल गया एवम् जिसने फ्रांस के बाद यूरोप में भी पुरातन व्यवस्था की जड़ों पर प्रहार किया" (हैनरी डब्ल्यू. लिटलफील्ड: हिस्ट्री ऑफ यूरोप (1500- 18481, पृ० 101) फ्रांस की क्रान्ति के यूरोप पर पड़े प्रभावों को अग्रिम बिन्दुओं में विभक्त कर देख सकते हैं:-

16.4.1 अधिकारों के लिए संघर्ष का सूत्रपात

क्रान्तिकारी के स्वतन्त्रता, समानता व बन्धुत्व आदि नारों ने समूचे यूरोप में एक स्फुरण भी जागृत कर दी । यूरोप भर में निरंकुश राजतन्त्रों के सिंहासन डोलने लगे व जनसाधारण द्वारा स्थान-स्थान पर अधिकारों की मांग को लेकर व्यापक जागृति आ गई । यूरोप भर में राजनीतिक अधिकारों की मांग को लेकर जन आंदोलन होने लगे ।

16.4.2 क्रान्तिकारी युद्ध

फ्रांस में क्रान्ति की सफलता से फ्रांस के पड़ोसी देश भयत्रस्त हो गये । उन्होंने फ्रांस का विरोध करना शुरू कर दिया । फ्रांस के प्रवासी कुलीनों, सामन्तों, पादरियों आदि ने भी यूरोप भर के राजा महाराजाओं को फ्रांस के विरुद्ध उत्तेजित करने का कार्य शुरू कर दिया । परिणामतः सन् 1792 से फ्रांस के विरुद्ध क्रान्तिकारी युद्धों की शुरुआत हुई और आगामी 23 वर्षों तक यूरोप इन युद्धों से त्रस्त रहा । इससे यूरोपीय देशों को असीम जन धन की हानि हुई। नेपोलियन क्रान्ति का रक्षक बना यूरोप से जूझता रहा । इंग्लैण्ड ने चार बार उसके विरुद्ध संगठन स्थापित किये परन्तु, नेपोलियन को पराजित करना कोई सहज कार्य नहीं था । अन्ततोगत्वा सन् 1814 में बाटरलू के मैदान में मित्र राष्ट्रों की संयुक्त सेनाएँ नेपोलियन को अन्तिम व निर्णायक रूप से पराजित करने में सफल हो सकीं तब कहीं जाकर यूरोप ने शान्ति व राहत की सांस ली ।

16.4.3 यूरोप में प्रतिक्रिया का युग:

क्रान्ति व क्रान्तिजनित विचारों से क्षुब्ध यूरोप के निरंकुश शासकों ने इन्हें समूल नष्ट करने के उद्देश्य से प्रतिक्रियावादी नीतियों को कार्यान्वित करना शुरू कर दिया। 1815 की वियना कांग्रेस के समस्त मुख्य निर्णयों के मूल में क्रान्ति जनित विचारों को नष्ट करना और फ्रांस को अंकुशित व नियन्त्रित करना ही प्रधान ध्येय रहा। सन् 1815 से 1845 तक आस्ट्रिया के चांसलर मेटर्निस ने तो इन उदारवादी विचारों व कार्यों को नष्ट करने के लिए एक के बाद एक ऐसे अनेक कार्य संपादित किये जिनके कारण इस युग को 'प्रतिक्रिया के युग' के नाम से ही जाना जाने लगा। इस समय प्रतिक्रिया के मूल में फ्रांस व उसकी क्रान्ति का भय अन्तर्निहित था।

16.4.4 सम्मेलनों का युग:

इस क्रान्ति के उपरान्त यूरोप में ऐसा वातावरण बना कि सर्वत्र युद्ध के बादल मंडराते रहे और युद्धों ने यूरोप को त्रस्त कर दिया। अनवरत युद्धों से तंग आकर यूरोप के राजनीतिज्ञों ने आपसी झगड़ों व विवादों का निपटारा युद्ध द्वारा न करके शान्तिपूर्ण विचार विमर्श द्वारा करने का निर्णय लिया और इसकी क्रियान्विति के लिए सन् 1818 से 1822 के मध्य एक्स.ला-शैपेल (1818 ई.), ट्रपो (1820 ई.) लाइबेख (1821 ई.) वैरोना (1822 ई.) सैन्ट पीटर्सबर्ग (1825 ई.) आदि स्थानों पर यूरोपीय राष्ट्रों के सम्मेलन हुए जिन्हें 'सम्मेलनों द्वारा कूटनीति' का सम्बोधन दिया गया। यद्यपि इन से कोई विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो सकी तथापि इन सम्मेलनों ने अपरोक्ष में आधुनिक संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधारशिला तैयार कर दी।

16.4.5 यूरोपीय साहित्य पर प्रभाव:

क्रान्ति व क्रान्तिजनित विचारों से प्रेरणा पाकर यूरोप के विद्वानों ने उच्च कोटि के क्रान्तिकारी साहित्य का प्रणयन किया। इन विद्वानों ने अपनी रचनाओं के द्वारा क्रान्ति जनित विचारों यथा स्वतन्त्रता, समानता, बन्धुत्व, राष्ट्रियता आदि की भावनाओं को आम जनता तक पहुंचाने का प्रयत्न किया। इन रचनाओं में विक्टर ह्यूगो की 'ला मिजरेबल' सदे की 'जोन ऑफ आर्क' वर्डजवर्थ की 'प्रीयूल्ड', शैली की 'मिस्टेक ऑफ अनार्की' आदि रचनाएं अपने आप में यूरोप ही नहीं विश्व की श्रेष्ठ क्रान्तिकारी साहित्यिक रचनाएँ मानी जाती हैं।

16.5 विश्वव्यापी स्थाई प्रभाव

फ्रांसीसी क्रान्ति कोई स्थानीय घटना नहीं थी। इसने न केवल फ्रान्स व यूरोप ही वरन् समूचे विश्व को भी प्रभावित किया। फ्रांस का उदाहरण पहले यूरोप का और फिर वहां से सम्पूर्ण विश्व की प्रेरणा का स्रोत बना। गृह लिखते हैं कि "इसने विश्व में सदियों से चली आने वाली व्यवस्था का अन्त करके एक ऐसी शक्ति को उत्पन्न किया जिसके फलस्वरूप एक नई सभ्यता का जन्म हुआ।" (कैम्ब्रिज माडर्न हिस्ट्री, पृ. 382) इस संदर्भ में एच0ए0 डेविस के ये विचार भी उल्लेखनीय हैं कि- "1917 की रूसी क्रान्ति से पूर्व और कुछ अंशों में उसके

बाद भी इस क्रान्ति ने संसार की अधिकांश महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं को प्रभावित किया।" (एन आउटलाईन हिस्ट्री ऑफ दि वर्ल्ड, पृ. 445) फ्रांसीसी क्रान्ति के निम्नलिखित स्थाई व विश्वव्यापी प्रभाव पड़े:-

16.5.1 स्वतन्त्रता की भावना:

फ्रांस की क्रान्ति के मुख्य उद्घोषों में से एक स्वतन्त्रता का उद्घोष था। क्रान्ति के बौद्धिक अग्रदूत रूसों ने अपनी कृति 'सामाजिक संविदा' में लिखा है कि मनुष्य जन्म के समय स्वतन्त्र था, किन्तु, बाद में वह कई तरह की जंजीरों में जकड़ गया। स्वतन्त्रता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए क्रान्तिकारियों ने पुरातन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक परम्पराओं के जाल को जड़ से उखाड़ फेंका। इसी क्रम में उन्होंने मानव अधिकारों की घोषणा की तथा राजा के दैवी अधिकारों का खण्डन किया। सामाजिक वर्ग भेद को समाप्त कर पादरी व सामन्त वर्ग के शोषण व अत्याचारों से जनता को स्वतन्त्रता मिली। कानून के समक्ष मनुष्य की समानता को स्थापित किया गया। राष्ट्रीय सभा द्वारा 'मानव अधिकारों की घोषणा' ने इस तथ्य पर बल दिया कि सर्वाधिक सम्पन्नता जनता में निहित है और कानून केवल जन इच्छा की अभिव्यक्ति हैं। शासन तन्त्र को इस प्रकार चलाया जाये कि जनता का अधिकाधिक हित हो और उसकी स्वतन्त्रता पर किसी प्रकार की आंच नहीं आए।

फ्रांसीसी क्रान्ति का दावा था कि जनता को अपने आप ही स्वयं पर राज्य करना चाहिए और शासन केवल 'जनता के लिए' ही नहीं, अपितु 'जनता द्वारा' भी होना चाहिए। यह तभी सम्भव है जब जनता स्वतन्त्रता का उपभोग कर रही हो। इस स्वतन्त्रता की विचारधारा ने विश्व भर में 'जंगल की आग' का काम किया। स्वतन्त्रता की विचारधारा समूची मानवता की प्रतिनिधि बन गई तथा दुनिया भर के सुधारकों व क्रान्तिकारियों का मूल मन्त्र बनती दिखाई दी। स्वतन्त्रता विश्व की परिपाटी बन गई। केवल व्यक्तिगत स्वतन्त्रता ही नहीं वरन् सम्पत्ति की स्वतन्त्रता, वोट देने के अधिकार की स्वतन्त्रता, सरकारी अधिकारियों के कार्यों की जांच 'करना, उत्तरदायी सरकार की स्थापना, लेखन, भाषण, प्रकाशन और विचाराभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता तथा नागरिक व राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए विश्व भर में आंदोलन हो लगे।

16.5.2 समानता

फ्रांसीसी क्रान्ति ने राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक समानता की भावना को जन्म दिया। मानव अधिकारों की घोषणा ने समानता के सिद्धान्त की सम्पुष्टी कर दी। अधिकार युक्त व अधिकार विहीन वर्गों का अन्त कर सामाजिक समानता को स्थापित किया गया। विधि या कानून के समक्ष सबकी समानता को स्वीकारा गया। सरकारी नियुक्तियों में भी समानता व योग्यता को कसौटी बना दिया गया। फ्रांस की क्रान्ति का दावा था कि प्रत्येक मनुष्य कानून के समक्ष समान है। जन्म और धन पर आधारित विशेषाधिकारों को नकार दिया गया। परिणामतः मुजारेदारी, सामन्तवादी प्रतिबन्ध और व्यापारिक संघों द्वारा स्थापित सारे प्रतिबन्ध समाप्त कर दिये गये। धार्मिक सहिष्णुता का मार्ग प्रशस्त हुआ। समाचार-पत्रों की स्वतन्त्रता स्थापित हुई व प्रत्येक व्यक्ति के शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार को समानता के

आधार पर मान्य ठहराया गया । सन् 1792 के 'स्त्रियों के अधिकारों की मान्यता' (Vindication of the rights of women) के प्रस्ताव द्वारा मेरी बुलस्टोन-क्राफ्ट ने मांग की कि स्त्रियों को पुरुषों के बराबर अधिकार प्राप्त हों । यह विचारधारा भी समूचे विश्व को प्रभावित करने में सफल रही और इस सिद्धान्त ने विश्व के इतिहास पर अमिट प्रभाव छोड़ा ।

16.5.3 राष्ट्रीयता की भावना:

फ्रांस की क्रान्ति ने ही विश्व को 'राष्ट्रीयता' नाम की प्रबल विचारधारा दी जिसने समग्र विश्व में तहलका मचा दिया । क्रान्ति से पूर्व सामन्तों व सजा के प्रति स्वामीभक्ति ही देशभक्ति थी । क्रान्ति ने फ्रांस के राज्य को एक राष्ट्र में परिवर्तित कर दिया । जब क्रान्ति का विरोध करने के लिए यूरोपीय देशों ने फ्रांस के विरुद्ध युद्ध छोड़ दिये तो फ्रांसीसी एक प्रबल राष्ट्रीय भावना से उत्प्रेरित होकर क्रान्ति और अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए संघर्ष में कूद पड़े थे। 11 जून सन् 1792 को 'पितृभूमि पर आपत्ति है' की घोषणा से लोगों में राष्ट्रीयता की भावना ने जोश मारा और फ्रांस को अपने शत्रुओं से टक्कर लेने का हौसला मिला । यूरोप के अन्य देशों पर फ्रांस के आक्रमण के कारण वहाँ की राष्ट्रीयता की भावना जागृत हो गई । 'प्रायद्वीपीय युद्ध' के मध्य स्पेन व पुर्तगाल में यही भावना जागृत हो गई । नेपोलियन के मास्को अभियान के समय इसी भावना ने रूसियों के हृदय में नेपोलियन से संघर्ष का साहस व हौसला पैदा किया । इसी भावना के बल पर प्रशा और आस्ट्रिया ने नेपोलियन का कट्टर विरोध किया और इसी प्रभावशाली भावना के कारण ही इंग्लैण्ड फ्रांस को क्रान्तिकारी युद्धों में पराजित कर सका । फ्रांसीसी क्रान्ति द्वारा पैदा की गई इसी भावना में इटली व जर्मन वासियों को अपने प्रदेशों के एकीकरण के लिए, एक लम्बे समय में भी यही भावना अन्तर्निहित थी । यही बात बेल्जियम, सर्बिया, ग्रीस, रूमानिया, बल्गेरिया के साथ हुई । इसी सिद्धान्त ने रूस को तब खूब परेशान किया जब पोलैण्डवासियों में अपनी स्वतन्त्रता के लिए रूस से संघर्ष किया । 1849 ई. में कासुय के नेतृत्व में हुआ हंगरी का विद्रोह भी राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत था । यह कहना, अतिशयोक्ति नहीं होगा कि 19 वीं शताब्दी के यूरोप का इतिहास इसी राष्ट्रीयता के संघर्ष का इतिहास है । (दृष्टव्य-हिहयेर बैलक: दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन, भूमिका)

16.5.4 प्रजातन्त्र की विचारधारा:

यह क्रान्ति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव था । 1789 ई. से पूर्व इंग्लैण्ड व स्विटजरलैण्ड के अतिरिक्त लगभग समूचे यूरोप में निरंकुश, स्वेच्छाचारी, सर्वाधिकार सम्पन्न शासकों का ही शासन था । शासन में जनता की कोई भागीदारी नहीं थी । क्रान्ति के महान दार्शनिक रूसों ने ही सर्वप्रथम यह आवाज बुलन्द की कि सर्वसत्ता जनता में ही निहित हैं । अगर नेपोलियन फ्रांस का सम्राट बना तो राजा के दैवी अधिकारों से नहीं वरन् जनता की इच्छा से बना था । क्रान्ति ने यह बात भली-भांति स्थापित कर दी कि शासन प्रजा के लिए ही नहीं वरन् प्रजा के द्वारा भी होना चाहिए, और वही सच्चा प्रजातन्त्र अर्थात् लोकतन्त्र है । डेवी का कथन है कि- 'उन्नीसवीं शताब्दी का इतिहास प्रजातन्त्र की ओर धीमी परन्तु, निश्चित प्रगति

का इतिहास है तथा इस उन्नति के लिए बड़े भाग पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से फ्रांस की क्रान्ति का प्रभाव है।" (क्रोपटकिन: दि ग्रेट फ्रेन्च रिवोल्यूशन, पृ० 52 से उद्धृत) फ्रांस की क्रान्ति से प्रेरणा पाकर विश्व भर में लोकतान्त्रिक अधिकारों की मांग उठाई जाने लगी और विश्व में कई स्थानों पर प्रजातन्त्र की स्थापना हो सकी। जहाँ कहीं राजतन्त्र अधिक सुदृढ़ स्थिति में अस्तित्वमान था वहाँ भी संवैधानिक राजतन्त्र की स्थापना होना प्रजातन्त्र की विजय ही कही जानी चाहिए।

16.5.5 बंधुत्व:

फ्रांस की क्रांति के स्वतन्त्रता, समानता, राष्ट्रीयता आदि विचारों ने न केवल फ्रांस को ही बन्धुत्व के बन्धन में बाधा वरन् इससे समूचे विश्व ने प्रेरणा ली। संसार भर के विविध राष्ट्रों के लोगों को बन्धुत्व के महत्व का ज्ञान मूलतः फ्रांस की 1789 ई. की क्रान्ति ने ही कराया था।

16.5.6 समाजवाद

इस क्रांति ने विश्व में समाजवाद का भी प्रसार किया। क्रांतिकारियों के 'समानता' और 'बन्धुत्व' के नारों ने अपरोक्ष में समाजवादी धारणा को पुष्टि प्रदान की। उन्होंने विश्व बन्धुत्व का नारा देकर कार्लमार्क्स के लिए यह नारा लगाने की पृष्ठ भूमि तैयार कर दी- "दुनिया भर के मजदूरों एक हो जाओ"। क्रोपटकिन लिखता है कि "यह क्रान्ति समस्त वर्तमान विचारधाराओं- साम्यवाद, आतंकवाद, समाजवाद आदि का मूल एवम् स्रोत थी।" (दृष्टव्य- क्रोपटकिन: पूर्व. पृ. 573-81)

16.5.7 शैक्षणिक क्षेत्र में परिवर्तन:

नेपोलियन ने राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली को जन्म दिया हो। पेरिस में विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। इसके द्वारा शैक्षणिक एकरूपता स्थापित करने के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सका। बाद में इसी पेरिस विश्वविद्यालय के नमूने पर ही लन्दन, बर्लिन और न्यूयार्क विश्वविद्यालयों की स्थापना कर उच्च अध्ययन निमित्त अन्तराष्ट्रीय स्तर के संस्थान स्थापित किये गये।

16.6 समीक्षा

निष्कर्ष स्वरूप ग्रह कहा जा सकता है कि फ्रांस की सन् 1769 ई. की क्रांति विश्व इतिहास की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना थी। इसने न केवल फ्रांस के जनजीवन को ही प्रभावित किया अपितु सम्पूर्ण यूरोप तथा कुछ अर्थों में समूचा विश्व इस घटना से प्रभावित हुआ। यह क्रांति विचार, समाज एवम् राजनीति के क्षेत्रों में एक ऐसी विजय थी जिसे एक राष्ट्र ने स्वेच्छाचारी निरंकुश शासन, वर्ग विशेषाधिकार, सामाजिक वैषम्य, चर्च की: प्रभुत्ता, सामन्तशाही और पुरातन व्यवस्था के ऊपर प्राप्त किया था। यह पीड़ित और उपेक्षित मानवता के युगों से संचित हो रहे दुख दर्दों का भंयकर विस्फोट था। यह निर्धन, पीड़ित, प्रताडित और गन्त्रणात्रस्त शोषित जनता के हृदयों से उठी ज्वाला थी जो शीघ्रातिशीघ्र सम्पूर्ण यूरोप में फैल

गई । क्रांति जनित स्वतन्त्रता, समानता, बन्धुत्व व प्रजातंत्र के विचारों ने यूरोप भर में एक राजनीतिक चेतना व स्फूर्णा जागृत कर दी एवम् यूरोप भर में अधिकारों की मांग को लेकर आंदोलन होने लगे । इसके प्रत्युत्तर में शीघ्र ही यूरोप में क्रांतिकारी युद्धों व प्रतिक्रिया के युग का सूत्रपात होता दिखाई दिया व अन्त तोगत्वा यूरोप को 'सम्मेलनों द्वारा कूटनीति' (संयुक्त व्यवस्था) के मार्ग पर अग्रसर होने को विवश होना पडा जिसने अनजाने में ही संयुक्त राष्ट्र संघ की आधारशिला रखने का कार्य निष्पादित कर दिया । क्रांति जनित स्वतन्त्रता, समानता, बन्धुत्व, राष्ट्रीयता, समाजवाद आदि के विचार तो इतने लोकप्रिय व प्रभावी बने कि हवा के वेग से सम्पूर्ण विश्व में प्रवाहित होते दिखाई दिये जिनका परिणाम यह निकला कि विश्व भर में राष्ट्रवादी आंदोलनों की बाढ़ सी आ गई व ऐसा लगने लगा कि जैसे सर्वत्र राजनीतिक व संवैधानिक चेतना की नई हवा प्रवाहित हो गई है । कई नये स्वतन्त्र राष्ट्र इसी मुक्त हवा की देन है । जिन्होंने विश्व राजनीति व इतिहास को नये आयाम दिये । प्रो. गुडविन का मत यहां प्रासंगिक होगा कि- "हमारे युग में 1789 की फ्रांस की क्रांति 1917 की रूसी क्रान्ति की छाया में दब गई है और इसके आदर्श नाजी व फासिस्ट क्रान्तियों से अस्थाई रूप से धुंधले पड गये थे । फ्रांस के देशी आलोचकों ने क्रांति द्वारा समाज और शासन से अधिक व्यक्ति को महत्व देने का आक्षेप किया है किन्तु, विदेशी समीक्षकों ने सर्वदा यह प्रश्न पूछा है कि क्या यह सब एक त्रुटि थी ? क्या स्वतन्त्रता व समानता प्राप्त करने के युद्ध में फ्रांस की बलि ज्यादा थी ? इस विषय में इतिहासकार 1789 की क्रांति का विश्लेषण अठारहवीं शताब्दी में हुए अनेक विप्लवों से तुलना करके करते हैं और इस तथ्य पर विशेष बल देते हैं कि इस क्रांति का आधुनिक प्रजातन्त्र की स्थापना में इतना योगदान था कि इसने सिद्धान्तों को निर्धारित किया और जनसाधारण की सर्वाधिकार सम्पन्नता को स्पष्ट कर दिया । आधुनिक तानाशाही का स्रोत भी किसी हद तक फ्रांस की क्रान्ति को ही माना जा सकता है क्योंकि 1793 की जैकोबिन तानाशाही और क्रांतिकारी सरकार, अस्थाई व्यवस्था थी जिसके आगे फ्रांस को गृह और विदेशी युद्ध, अपनी राष्ट्रीयता व उदार सिद्धान्तों की रक्षा के लिए थोड़े समय तक झुकना पडा था ।" प्रो. गुडविन की मान्यता से यह निष्कर्ष निकलता है कि वस्तुतः बहुत पहले ही सन् 1789 ई. में हुई फ्रांसिसी क्रांति ने रूसी क्रांति की आधारशिला रख दी थी । ऐसे सिद्धान्तों का सूत्रपात कर दिया था जो आने वाले समय में विश्व इतिहास की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं के मार्गदर्शक सिद्धान्त बनते दिखाई दिये ।

16.7 अभ्यास प्रश्न

1. "सन् 1789 ई. की क्रांति 'आंशिया रिजीम' (पुरातन व्यवस्था) के विरुद्ध एक जबर्दस्त विस्फोट था ।" इस कथन के संदर्भ में क्रांति के प्रभावों का विश्लेषण करें ।
2. 1789 ई. की फ्रांस की महान राज्य क्रान्ति ने फ्रांस के राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक जनजीवन को किस रूप में व कितना प्रभावित किया'

3. "फ्रांस की 1789 ई. की क्रांति का प्रथम प्रभाव फ्रांस के पश्चात इंग्लैण्ड पर दृष्टिगोचर हुआ" इस कथन की सत्यता का परीक्षण करते हुए क्रांति के इंग्लैण्ड पर पड़े प्रभावों का विश्लेषण करें ।

4. फ्रांस की महान राज्य क्रान्ति के प्रभाव क्या केवल मात्र फ्रांस तक ही सीमित रहें या यूरोप भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका ? इस कथन का परीक्षण तथ्यों के बाधार पर करें ।

5. फ्रांस की 1789 ई. की क्रान्ति के विश्व पर क्या स्थायी व दीर्घकालिक प्रभाव पड़े ?

6. 'फ्रांस की क्रान्ति ने विश्व इतिहास को कतिपय नूतन आयाम दिए ।' इस संदर्भ में इसके प्रभाव की विवेचना करें ।

16.8 संदर्भ पुस्तकें

जॉन हाल स्टीवर्ट : ए डॉक्यूमेंट्री सर्वे ऑफ दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन

ईश्वरी प्रसाद : क्रांतिकारी यूरोप तथा नेपोलियन का युग

जे. हॉलैण्ड राज : फ्रांस की राज्य क्रान्ति और नेपोलियन

सी.डी.एम. कैटलबी : ए हिस्ट्री ऑफ माडर्न टाइम्स

लियो गर्शाय : दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन एण्ड नेपोलियन

कोबाल अल्फर : हिस्ट्री ऑफ फ्रेन्च रिवोल्यूशन

लार्ड एक्टन : रिवोल्यूशनरी आइडियाज इन फ्रांस

मादलॉ : फ्रेन्च रिकेल्डेशन

सीजी.एच. हेज एण्ड वी थामस मून : माडर्न हिस्ट्री

सी. डी. हेजन : माडर्न यूरोप अप टू 1945

हर्नशा : मेन करैन्ट्स ऑफ यूरोपियन हिस्ट्री

डेविड थोमसन : यूरोप सिन्स नेपोलियन

एलन.जार्ज.एच : फ्रेन्च रिवोल्यूशन वोल्युम ।

साल्वेमिनी : दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन

हेजन : दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन वोल्युम

ग्राण्ट एण्ड टेम्परली : यूरोप इन दि नाइन्टीथ एण्ड ट्वन्टीथ सैन्चुरीज

हैनरी लिटल फील्ड : हिस्ट्री ऑफ यूरोप (1500-1848)

वार्नर मार्टिन एण्ड म्यूर : दि यू ग्राउण्ड वर्क ऑफ ब्रिटिश हिस्ट्री

वर्क : रिफ्लैक्शंस ऑर दि फेंच रिवोल्यूशन

एच०ए० डेविस : एन आउटलाईन हिस्ट्री ऑफ दि वर्ल्ड

हिल्येर ब्लैक : दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन

क्रोपटकिन : दि ग्रेट फ्रेन्च रिवोल्यूशन

गुडविन : दि फ्रेन्च रिवोल्यूशन

इकाई -17

नेपोलियन का युग

- 17.0 उद्देश्य
- 17.1 प्रस्तावना
- 17.2 नेपोलियन का उत्थान (कोन्सुलशिप 1799-1804)
 - 17.2.1 आन्तरिक समस्याएं
 - 17.2.2 प्रशासनिक
 - 17.2.3 वित्तीय
 - 17.2.4 धार्मिक
 - 17.2.5 शिक्षा प्रणाली
 - 17.2.6 नागरिक प्रशासन
 - 17.2.7 विदेश नीति
- 17.3 नेपोलियन सम्राट के रूप में
- 17.4 नेपोलियन का पतन
 - कन्टीनेन्टल सिस्टम; बर्लिन घोषणा 1806;
 - मिलान घोषणा 1807; फ्रोंटेनब्लू घोषणा-1810.
 - पेपल राज्य का विलय-1809.
 - पुर्तगाल से युद्ध; स्पेन के सम्राट चार्ल्स चतुर्थ का गद्दी से उतरना
 - प्रायद्वीप का युद्ध
 - आस्ट्रिया से युद्ध 1809.
 - रूस पर आक्रमण 1812.
- 17.5 नेपोलियन के साम्राज्य का विनाश
 - चतुर्थ गुट
 - नेपोलियन की रूस और प्रशिया पर विजय;
 - कुलिच (Kalisch) की सन्धि 1813; लुटजेन और बाटज़ेन का युद्ध
 - आस्ट्रिया का नेपोलियन के प्रति दृष्टिकोण
 - लिपजिग का युद्ध 1813.
 - संयुक्त (Allied) देशों का फ्रांस पर आक्रमण 1814.
 - फ्रोंटेन ब्लू की सन्धि 1814.
 - नेपोलियन की ऐल्बा से वापसी-1815
 - वाटरलू का युद्ध 1815.
- 17.6 नेपोलियन की भूलें

- और राष्ट्रीयता-जर्मनी, इटली, पोलैंड, तुर्की साम्राज्य (Ottomon Eaufrise)-
- और वैज्ञानिक प्रगति

17.7 उपसंहार

17.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

17.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

17.0 उद्देश्य

इस यूनिट में आप इन विषयों का अध्ययन करेंगे:-

1799 के संविधान (Coup d 'etat) में नेपोलियन की उपलब्धि और प्रथम कौन्सल के रूप में उसकी शक्ति का केन्द्रीयकरण ।

आन्तरिक मामलों में उसने फ्रांस को यूरोप का एक महान शक्तिशाली देश बनाने का प्रयत्न किया और इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु उसने प्रशासनिक, आर्थिक, धार्मिक, शिक्षा संबंधी इत्यादि सुधारों का सूत्रपात किया ।

उसकी अद्वितीय वीरता, उच्च महत्वाकांक्षा, अभूतपूर्व सौहार्द और फ्रांस की जनता के सहयोग ने न केवल उसको फ्रांस का सम्राट बनाया परन्तु केवल अविजित ब्रिटेन को छोड़ कर समस्त यूरोप का स्वामी भी बना दिया ।

नेपोलियन का ब्रिटेन की आर्थिक व्यवस्था अपने कन्टीनेन्टल सिस्टम द्वारा नष्ट करने का प्रयत्न उसके लिए आत्मघाती सिद्ध हुआ ।

उसका रूस पर आक्रमण और इसकी लिपजिग में पराजय नेपोलियन के साम्राज्य के विनाश का कारण बने और अंत में उसकी वाटरलू के युद्ध में पराजय का मुंह देखना पड़ा और उसको देश निकाले के रूप में सेन्ट हेलेना में 1815 में भेज दिया गया ।

17.1 प्रस्तावना

नेपोलियन बोनापार्ट जो "एक क्रान्ति पुत्र" और "भाग्य का धनी" था, उसका जन्म एक छोटे से द्वीप के ग्राम अजासिओ (Ajaccio) में 15 अगस्त 1769 में उस समय हुआ था जब इस द्वीप को फ्रांस ने जेनोआ से खरीदा था । उसने फ्रांस सरकार के खर्च से ब्रिगेन और पैरिस में उच्च सैनिक शिक्षा प्राप्त की थी । उसने एक इन्जीनियर और आर्टिलेरी मेन (आग्नेय शस्त्र चलाने वाला व्यक्ति) के रूप में अपना जीवन जेकोबिन्स के साथ रह कर प्रारंभ किया था और टोलोन पर सन् 1793 में पुनः विजय प्राप्त करने में अपनी योग्यता का अभूतपूर्व प्रदर्शन किया था । इसके अतिरिक्त 1795 में उसने वेन्डेमीएअर रायलिस्ट राज विद्रोहियों कि खिलाफ कन्वेन्शन की सुरक्षा की । उसने इटली के विरुद्ध युद्ध करने में विशेष श्रेय अर्जित किया और वह फ्रांस में इतना लोकप्रिय हो गया कि फ्रांस की जनता उसको फ्रांस का सर्वोच्च जनरल (सैन्य अधिकारी) मानने लगी ।

इस प्रकार, सन् 1799 में नेपोलियनव का काउन्सिलरशिप के पद पर उन्नति से लेकर सन् 1815 में उसके सेन्ट हेलेना टापू पर देश निकाले पर जाने के समय तक, उसने न केवल

फ्रांस अपितु समस्त यूरोप के इतिहास में अपनी प्रभुता स्थापित की, जिसके कारण इस समय को "नेपोलियन युग" की संज्ञा दी गई ।

वास्तव में "नेपोलियन युग" सन् 1804 से लेकर 1814 तक कुल दस वर्ष तक रहा । सन् 1799 से लेकर 1804 तक, फ्रांस एक गणतंत्र (Republic) के रूप में नेपोलियन की कौंसुलरशिप के अधीन रहा । सन् 1804 में नेपोलियन ने स्वयं को फ्रांस का सम्राट घोषित कर दिया । इस कारण से उसने यह अथक प्रयत्न किया कि फ्रांस एक उपनिवेश साम्राज्य के रूप में रहे । उसने इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु निरन्तर युद्धों, विजयों, साम्राज्य-विस्तार तथा संधियों का सहारा लिया और उसके इन प्रयत्नों से फ्रांस के यश, मान और समृद्धि में वृद्धि हुई । उसने फ्रांस के क्रान्तिकारी विचारों, जैसे समानता, स्वतंत्रता, भ्रातृभाव और राष्ट्रवाद को समस्त यूरोप में फैलाया। सी०डी० हेज़न ने सत्य ही कहा है कि "नेपोलियन की तुलना अलेग्जेन्डर (सिकन्दर), सीज़र, चार्लमेगन जैसे शक्तिशाली विजेताओं और शासकों से की जाती है । इन चारों व्यक्तियों के तुलनात्मक अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इन सब में नेपोलियन ही सबसे अधिक महान था ।"

17.2 नेपोलियन का उत्थान (कोन्सुलरशिप) 1799-1804

नेपोलियन ने डायरेक्टर सीयेस तथा सेना की सहायता से 19 नवम्बर 1799 को बलपूर्वक (Coup d 'etat) डायरेक्टरी को समाप्त कर दिया । सीयेस (Sieyes) ने नये संविधान (Constitution) की रचना की, जिसको नेपोलियन ने कुछ अल्प सुधारों के साथ स्वीकार कर लिया । यह संविधान कोन्सुलर कान्सटीट्यूशन या आठवें वर्ष के कन्सटीट्यूशन के नाम से प्रसिद्ध हुआ ।

इस कान्सटीट्यूशन (संविधान) की धाराओं (provisions) के अनुसार अब फ्रांस एक गणतन्त्र (Republic) देश हो गया । देश में शासन करने का अधिकार तीन कोन्सलों को दिया गया । ये कोन्सल दस चर्च के लिए चुने गए । इनमें से प्रथम कोन्सल के पद पर नेपोलियन बोनापार्ट के नाम का सुझाव पेश किया गया।

प्रथम कोन्सल को असीमित शक्ति प्रदान की गई । प्रशासनिक, नागरिक, सैन्य एवं विदेशी मामलों में इस असीमित शक्ति प्राप्त होने के कारण वास्तव में वह एक डिक्टेटर हो गया।

देश में कानून बनाने का अधिकार (Legislative powers) तीन विभिन्न संस्थाओं को सौंपा गया, जिनके नाम इस प्रकार थे:-

- 1- काउन्सिल आफ स्टेट्स।
- 2- ट्रिब्यून, जिसमें एक सौ सदस्य (members) थे ।
- 3- लेजिस्लेटिव बाडी (विधान सभा), जिसमें तीन सौ डिप्टी थे ।

देश के लिए समस्त कानूनों एवं बिलों को बनाने का अधिकार काउन्सिल आफ स्टेट के अधीन रहा । इन कानूनों और बिलों पर ट्रिब्यून बहस करती थी, परन्तु उसे वोट देने का

अधिकार नहीं था जबकि संविधान सभा (Legislative Body) इस पर अपने वोट बगैर बहस किए देती थी।

चतुर्थ संस्था सीनेट थी, जिसमें अस्सी सदस्य होते थे । इसके अधिकार क्षेत्र में संविधान (Constitution) की व्याख्या करना, न्यायाधीशों (Judges) की नियुक्ति करना, भावी (Future) कोन्सलों का चुनाव करना और विधानसभा (Legislature) के सदस्यों को सेलेक्ट करना था।

परन्तु वास्तविक रूप में, प्रथम कोन्सल ही काउन्सिल आफ स्टेट्स तथा सीनेट के सदस्यों को मनोनीत (Nominate) करता था और इस प्रकार ये दोनों संस्थाएँ प्रथम कोन्सल के हाथ का खिलौना थीं । इसलिए व्यवहारिक रूप में फ्रांस एक गणतन्त्र देश के रूप में रहा परन्तु देश की समस्त शक्ति प्रथम कोन्सल अर्थात् नेपोलियन बोनापार्ट के हाथों में केन्द्रित थी।

नेपोलियन प्रथम कोन्सल के पद पर

कोन्सल के पद पर आसीन नेपोलियन को घरेलू एवं बाह्य संबंधों के विषय में कई कठिन कार्य करने पड़ते थे । इसलिए उसने सर्वप्रथम फ्रांस में कानून व्यवस्था सुधारने एवं शान्ति: स्थापित करने की दिशा में अपना ध्यान केन्द्रित किया ।

17.2.1 आन्तरिक समस्याएं (Domestic Affairs)

नेपोलियन ने फ्रांस की समस्त आन्तरिक शासन व्यवस्था में अनेक परिवर्तन किए, जो उसकी प्रशासनिक क्षमता एवं योग्यता के परिणाम स्वरूप थे ।

17.2.2 प्रशासनिक (Administrative) व्यवस्था

नेपोलियन ने यह महसूस किया कि किस प्रकार स्वतंत्रता के नाम पर देश में अराजकता पैदा की जाती है । इसलिए उसने देश में एक शक्तिशाली केन्द्रीय शासन का सूत्रपात किया, जिसका बाह्य स्वरूप प्राचीन राजतंत्र प्रणाली के अनुरूप ही था । प्रत्येक विभाग एक परफेक्ट के अधीन रखा गया । यह अधिकारी एक उच्च श्रेणी का सरकारी अधिकारी था । इसकी नियुक्ति प्रथम कोन्सल द्वारा की जाती थी और अपने कार्यों के लिए वह उसी के समक्ष उत्तरदायी होता था । छोटे जिलों (Arrondissements) को सब परफेक्ट के अधीन रखा गया । कानून व्यवस्था, कर तथा कन्सक्रिप्शन इनके अधिकार क्षेत्र में थे । इन पर कम्प्यून्स का निरीक्षण रहता था । प्रत्येक छोटे कम्प्यून्स के मेयर की नियुक्ति परफेक्ट के द्वारा की जाती थी, परन्तु पांच हजार से अधिक जनसंख्या वाले नगर के मेयर की नियुक्ति प्रथम कोन्सल द्वारा की जाती थी ।

17.2.3 वित्तीय व्यवस्था

नेपोलियन के लिए वित्त राज्य व्यवस्था चलाने के लिए एक आवश्यक अंग था । वह यह भली भांति जानता था कि देश की आर्थिक व्यवस्था के बिगड़ने के फलस्वरूप ही पिछली दो सरकारों अर्थात् लुई सोलहवां और डाइरेक्टरी का पतन हुआ था । इसलिए उसने एक सुदृढ़ वित्तीय व्यवस्था को जन्म दिया जो युद्धों के अतिरिक्त भार को सफलतापूर्वक वहन कर सके ।

समस्त कर प्रणाली को पुनः संगठित किया गया और करों को वसूल करने के लिए अधिक सुचारु एवं शक्तिशाली व्यवसाय का सूत्रपात किया। उसने मुनाफाखोरी को एक व्यवसाय होने से रोका, ठेकेदारों तथा अन्य व्यक्तियों की अनुचित कार्य प्रणाली पर नियन्त्रण स्थापित किया, स्टाक एक्सचेंज प्रणाली को सुव्यवस्थित किया, मुद्रा प्रणाली में सट्टे की प्रवृत्ति पर अंकुश स्थापित किया और प्रशासनिक खर्च में कमी की। उसने एक सुदृढ़ आर्थिक प्रणाली स्थापित करने हेतु सन् 1800 में बैंक आफ, फ्रान्स की स्थापना की। देश में व्यापार एवं अन्य व्यवसायों की उन्नति के लिए अनेक सुरक्षात्मक उपाय किए गए। इसी प्रकार कृषि क्षेत्र में भी उन्नति के प्रयत्न किए गए। नेपोलियन ने क्रान्ति के समय हुए भूमि सेटलमेन्ट में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया।

17.2.4 धार्मिक व्यवस्था

एक व्यक्ति जो मिस्र (Egypt) में एक मुस्लिम है तथा फ्रान्स में एक कैथोलिक (ईसाई) है, इन दोनों को राज्य की ओर से किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन प्राप्त नहीं हुआ। नेपोलियन ने एक कुशल राजनैतिक होने के नाते उसने धर्म को एक राजनैतिक हथियार के रूप में एक सेफ्टी वाल्व के रूप में काम में लिया। उसने सन् 1800 में पोप पायस सप्तम के साथ एक समझौता कानकोरडे नामक किया, जिसमें उसने ईसाईयों के कैथोलिक धर्म को फ्रांस की जनता का धर्म स्वीकार किया। इसके फलस्वरूप पोप ने बिशपों की संख्या घटाने के लिए अपनी सहमति प्रकट की और चर्च की सम्पत्ति का पुर्ननिर्धारण किया गया। प्रीस्टों (पादरियों) की नियुक्ति बिशपों द्वारा की गई। फ्रांस की सरकार ने प्रार्थना व्यवस्था हेतु भवनों को उपलब्ध कराया तथा बिशपों और पीस्टों को उपयुक्त वेतन देना प्रारंभ किया। इसके अतिरिक्त नेपोलियन ने यह स्पष्ट किया कि कोई भी पोप का आदेश प्रथम कोन्सल की आज्ञा के बगैर प्रकाशित नहीं किया जाएगा। धार्मिक झगड़ों को काउन्सिल आफ स्टेट के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा। बिशप अपने नियुक्त स्थान (Dioces) से बगैर अनुमति के अनुपस्थिति नहीं रहेंगे।

17.2.5 शिक्षा प्रणाली

नेपोलियन जो स्वयं एक बहुत बड़ा विद्वान था, उसने सर्वप्रथम देश में एक राष्ट्रीय शैक्षणिक व्यवस्था के विषय में सोचा जिसका मुख्य उद्देश्य देश में प्रतिभाओं (Talents) की खोज और उनको देश सेवा में प्रयोग करना था, जैसे सैन्य व्यवस्था, न्याय व्यवस्था एवं अन्य देशोपयोगी कार्य। उसने अपने इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु चार प्रकार के स्कूल खोले। जैसे:-

प्राइमरी या एलीमेन्ट्री स्कूल- जिसकी व्यवस्था प्रत्येक कम्यून् द्वारा की जाती थी और ये परफेक्ट्स और सब परफेक्ट्स के निरीक्षण में कार्य करते थे।

सेकेन्ड्री स्कूल- इनमें फ्रेन्च और लैटिन भाषाओं तथा प्रारम्भिक विज्ञान की विशिष्ट शिक्षा प्रदान की जाती थी।

लाइसीज या हाई स्कूल- ये प्रत्येक मुख्य नगर में खोले गए । स्पेशल स्कूल्स-जैसे टेकनीकल स्कूल्स, सिविल सर्विस स्कूल्स और मिलिट्री स्कूल्स ।

पूरे फ्रांस के लिए एक युनिवर्सिटी की भी स्थापना की गई । जिसका कार्य सत्रह जिलों में स्थित शिक्षण संस्थाओं की शिक्षा पद्धति का निरीक्षण करना था ।

इसी प्रकार स्त्रीशिक्षा को भी प्रोत्साहित किया गया और स्त्रियों के लिए पर्याप्त वजीफे (Scholarship) प्रदान किए गए ।

17.2.6 नागरिक प्रशासन

नेपोलियन ने एक समय कहा था कि "मेरी ख्याति चालीस युद्धों में प्राप्त करना नहीं है वरन् जो सदैव स्मरण किया जाएगा और कभी नहीं भुलाया जा सकेगा वह मेरा नागरिक कानून (Civil Code) होगा ।"

उसने प्राचीन, रुढ़िवादी, जंगली, असमानतापूर्ण, एवं निर्बल विधान की अपेक्षा एक उन्नतिशील, एक समान, अधिक सरल एवं आधुनिक विधान (Laws) की रचना की । इस प्रकार अधिक स्पष्ट, विशद, एवं सिस्टेमेटिक कानून संहिता को उसने प्रचलित किया ।

सन् 1804 में नेपोलियन ने नागरिक संहिता कानून (Code of Civil Procedure) बनाया । इसके पश्चात् 1807 ये व्यापार संहिता कानून (Code of Commerce) बनाया गया । सन् 1810 में दंड संहिता (Penal Code) बनाया गया । इन समस्त कानूनों का एक सामान्य नाम "नेपोलियन की कानून संहिता" (Code of Napoleon) दिया गया।

यह कानून संहिता फ्रांस में हुई राज्य क्रांति के फलस्वरूप प्रकाश में आई । इसमें धार्मिक सहिष्णुता, सामाजिक समानता, विवाह पद्धति, से संबंधित कानून बनाए गए । इसमें विवाह विच्छेद (Divorcee) अर्थात् तलाक को भी मान्यता दी गई । इस विधान के अंतर्गत पारिवारिक जीवन के मूल्यांकन को महत्व दिया गया तथा पिता के अधिकार एवं निजी सम्पत्ति को सुरक्षा प्रदान की गई तथा अवैध सन्तानों को समान सामाजिक अधिकार से वंचित किया गया।

कई बार प्रतिभाओं को प्रोत्साहन के अभाव में नष्ट हो जाना पड़ता है । नेपोलियन ने राष्ट्रीय प्रतिभाओं को उचित प्रोत्साहन देने हेतु अनेक कार्य किए । उसने कई राजकीय अधिकारियों एवं सैन्य अधिकारियों को समाज के मध्यम वर्ग में से चुना । उसने फ्रांस की उच्च कोर्ट के प्रतिभा शील व्यक्तियों की समाज में प्रतिष्ठा बढ़ाने हेतु, "लीजन आफ आनर्स" की स्थापना की ।

नेपोलियन का एक मुख्य कार्य नगरों का सौंदर्यकरण करना था । उसने फ्रांस की राजधानी को एक अत्यधिक सुसज्जित नगर बनाया । उसने फ्रांस की राजधानी पैरिस को यूरोप का एक अत्यंत आधुनिक नगर बनाने एवं इसकी सुन्दरता में चार चांद लगाने हेतु केवल नगरीय सीमा की वृद्धि ही नहीं की वरन् उसकी सुन्दरता एवं गरिमा में वृद्धि करने हेतु उसमें विजय स्तम्भों (Towers of Victory) का निर्माण कराकर उनको युद्ध में विजित विभिन्न चित्रों एवं मूर्तियों से सुसज्जित किया, जिससे पैरिस "यूरोप की रानी" (Queen of Europe)

कहला सके । इसके अतिरिक्त यह नगर यूरोप की समस्त राजदयानीयों से सड़क मार्ग से भी जुड़ा हुआ था ।

17.2.7 विदेश नीति

जिस समय नेपोलियन प्रथम कौंसल के पद पर आसीन हुआ, उस समय एक द्वितीय गुट की स्थापना, फ्रांस के विरुद्ध की गई । इस गुट में ब्रिटेन, रूस (Russia) आस्ट्रिया, पुर्तगाल, नेपल्स और तुर्की सम्मिलित थे ।

नेपोलियन ने अपने इन शत्रुओं को एक के बाद एक के सिद्धांत पर निबटना था । अपने इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु उसने वे आस्ट्रिया के विरुद्ध एक द्वितीय इटली युद्ध छेड़ने का संकल्प किया । वह अत्यंत तीव्र गति से अत्यंत उपजाऊ घाटी "पो" में पहुंचा और 14 जून 1800 में मारेन्गो के स्थान पर अपने शत्रु को एक भीषण पराजय दी । इसके बाद एक द्वितीय विजय दिसम्बर 1800 को दक्षिण जर्मनी में होहेनालिन्डन के स्थान पर मोरियू के नेतृत्व में मिली ।

इसी समय, फ्रांस का एक कट्टर शत्रु, जार पाल, जो राजतंत्र के सिद्धान्त का एक प्रबल समर्थक था, वह नेपोलियन का समर्थक हो गया और उसने नेपोलियन की सहायता की आश्वासन भी दिया ।

इस प्रकार आस्ट्रिया एक प्रकार से सबसे अलग हो गया और इससे प्राप्त निराशा के फलस्वरूप उसने शान्ति की प्रार्थना की । इसके फलस्वरूप 9 फरवरी 1801 को लुनेविले की संधि पर हस्ताक्षर किए गए । इस संधि ने केम्पो फ़ोरमिओं की संधि की धाराओं की पुष्टि की। इसमें कुछ धाराओं को संशोधित भी किया गया जो आस्ट्रिया के हित में नहीं थीं । उसको बटेवियन, हेल्वेटिक तथा किसालपाइन गणतंत्र राज्यों को मान्यता देनी पड़ी तथा इसके साथ-साथ फ्रांस द्वारा बेल्जियम के प्रदेश पर अधिकार तथा राइन नदी के बाएं किनारे वाले प्रदेश के अधिकार को भी स्वीकार करना पड़ा । इन समझौतों के फलस्वरूप उसे अपनी प्रजा पर से अपना अधिकार खोना पड़ा ।

एमीन्स की सन्धि

ब्रिटेन और फ्रान्स एक समान शक्तिशाली देश थे । इनमें से एक को सामुद्रिक क्षेत्र में तथा दूसरे के भूमिीय क्षेत्र में प्रधानता प्राप्त थी । इन दोनों देशों को स्वयं की शक्ति पर पूर्ण विश्वास था । पिट के पतन के पश्चात् नये बने प्रधानमंत्री एडिंगटन ने फ्रांस से युद्ध करना उचित नहीं समझा इसके फलस्वरूप 27 मार्च, 1802 में एमीन्स नामक स्थान पर एक सन्धि पर हस्ताक्षर किए गए । इस सन्धि के अनुसार ब्रिटेन ने युद्धों के द्वारा जो उपनिवेश विजित किए थे, उनमें से केवल लंका (Ceylon) और ट्रिनिडाड को छोड़कर वह माल्टा नाइट्स आफ सेन्ट जॉन को तथा मिनोरका स्पेन को देने पर सहमत हो गया । नेपोलियन को मिश्र (Egypt) पर स्वयं का अधिकार छोड़ने पर तैयार होना पड़ा ।

परन्तु एमीन्स की सन्धि एक पूर्ण शान्ति स्थापित नहीं कर सकी क्योंकि ब्रिटेन को यह आशंका थी कि फ्रांस की स्वयं भी एक औपनिवेशिक साम्राज्य बनाने की योजना है ।

ऐसा कहा जाता है कि नेपोलियन ने अपना एक प्रतिनिधि मंडल भारत में डेकेइन् के प्रतिनिधित्व में भारतीय राजाओं को ब्रिटेन के विरोध में भेजा। इसके पश्चात् एक अन्य प्रतिनिधि मंडल जनरल से बस्टानी के नेतृत्व में मिश्र (Egypt) में भेजा गया। इसके अतिरिक्त फ्रांस ने बेल्जियम और डच नीदरलेन्ड्स पर स्वयं का प्रभाव बढ़ाने के अतिरिक्त राइन नदी प्रदेश तथा इटली पर भी अपना प्रभुत्व हढ़ किया। वह स्पेन से भी एक सन्धि करने में सफल हो गया। इससे ब्रिटेन की स्वयं की व्यापारिक सुविधाओं पर एक आघात लगा। इसलिए ब्रिटेन ने माल्टा प्रायद्वीप से अपनी सेना हटाने से इन्कार कर दिया। और मई 1803 में फ्रांस के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया।

17.3 नेपोलियन का सम्राट बनना- 1804

सन् 1802 में जनमत के आधार पर नेपोलियन जो दस वर्ष हेतु कोन्सल के पद पर आसीन था, उसका काल समस्त जीवन पर्यन्त कर दिया गया तथा उसको उसके उत्तराधिकारी घोषित करने का भी अधिकार दे दिया गया। परन्तु 1804 में सीनेट ने एक नए संविधान की रचना कर नेपोलियन को फ्रांस का सम्राट घोषित कर दिया जिसका समर्थन अप्रत्याशित संपूर्ण जनमत (Vote) द्वारा किया गया। इसके फलस्वरूप 2 दिसम्बर 1804 को मध्यकालीन चर्च केथेड्रल आफ नोट्रे डेम में, एक विशाल समारोह में, पोप पायस सप्तम ने नेपोलियन के मस्तक पर राजमुकुट सुशोभित करके उसको फ्रांस का सम्राट घोषित कर दिया।

तृतीय गुट

इसी समय अप्रैल 1804 में पिट पुनः ब्रिटेन का प्रधानमंत्री बन गया। उसने नेपोलियन के विरुद्ध एक तृतीय गुट की रचना थी। इस गुट में ब्रिटेन, रूस, आस्ट्रिया, स्वेडन तथा नेपल्स सम्मिलित है। जबकि प्रशिया तटस्थ (Natural) रहा क्योंकि उसे नेपोलियन से हनोवर प्राप्त हो गया था।

तृतीय गुट के मुख्य युद्ध

उल्म का युद्ध- 20 अक्टूबर, 1805: फ्रांस की सेना ने आस्ट्रिया मई सेना को, जो जनरल मेक के नेतृत्व में थी, बटरबर्ग में स्थित उल्प नगर में 20 अक्टूबर, 1805 को पराजित किया। आस्ट्रिया के पचास हजार सैनिक सहित आत्मसमर्पण कर दिया।

ट्रेफाल्गर का युद्ध- 21 अक्टूबर, 1805: यद्यपि नेपोलियन में आस्ट्रिया के ऊपर एक बहुत बड़ी विजय प्राप्त कर ली थी परन्तु उसकी सामुद्रिक सेना (जिसमें फ्रांसीसी तथा स्पेनी जहाज सम्मिलित थे) को 21 अक्टूबर 1805 को लार्ड नेल्सन के हाथों पराजय का मुंह देखना पड़ा। इस युद्ध से समुद्र पर ब्रिटेन की प्रभुता पूर्णरूप से स्थापित हो गई और पूर्ण नेपोलियन युग में उसको इस स्थान से कोई न हटा सका।

आस्टरलिज का युद्ध- 2 दिसम्बर, 1805- नेपोलियन ने बिना समय गंवाए आस्ट्रिया और रूस की सम्मिलित सेना का आस्टरलिज में सामना किया और उनकी 2 दिसम्बर 1803 को भीषण पराजय दी।

अंततः आस्ट्रिया शीघ्र ही इस तृतीय गुट से पृथक हो गया।

प्रेसबर्ग की संधि

आस्ट्रिया के सम्राट फ्रान्सिस द्वितीय ने शान्ति स्थापना का प्रस्ताव रखा । इसके फलस्वरूप 26 दिसम्बर 1805 को प्रेसबर्ग में एक सन्धि पर हस्ताक्षर किए गए । इस संधि के अनुसार आस्ट्रिया को वेनेशिया, इसशिया, डालमेशिया फ्रांस को देने पड़े और उसे केवल ट्रीएटे को स्वयं के पास रखना पड़ा । फ्रांसिस, द्वितीय ने नेपोलियन को इटली का सम्राट स्वीकार किया और उसे बवेरिया और बुरटेमबर्ग के प्रदेशों पर अपना अधिकार छोड़ना पड़ा । जिनको बाद में नेपोलियन ने अलग राज्य बना । इस प्रकार आस्ट्रिया को लगभग तीन लाख उसकी प्रजा तथा उसकी इटली प्रदेश छोड़ना पड़ा जिससे उसकी आय में काफी कमी आई ।

प्रशिया

अब नेपोलियन का ध्यान प्रशिया की ओर आकर्षित जिससे उसका संबंध उसके तृतीय गुट में सम्मिलित होने के कारण ले गया था । परन्तु प्रशिया को नेपोलियन की हनोवर के प्रति दृष्टिकोण पर आशंका उत्पन्न हो गई थी और उसे ऐसा भय उत्पन्न हो गया था कि राइन प्रदेश के राज्यों का एक संघ (Confederation) बना दिया जाएगा । प्रशिया का राजा विलियम तृतीय एक दुर्बल प्रकृति व मनुष्य था परन्तु उसको घमंडी रानी लुई ने प्रोत्साहित किया कि उसे वीरतापूर्वक फ्रांस का सामना करना चाहिए । इसलिए प्रशिया ने जार से मिलकर सन् 1806 में फ्रांस से युद्ध छेड़ दिया ।

जेना का युद्ध- 14 अक्टूबर 1806- नेपोलियन के शीघ्र ही प्रशिया के विरुद्ध कार्य किया, जिससे रूस की सेना प्रशिया की सहायता के लिए न पहुंच सके । उसके अपने इस कार्य में सफलता मिली और उसे एक दिन में दो विजय प्राप्त हुई । जैसे, उसने जेना में प्रिन्स हो हेन लोहे को परास्त किया और फ्रांसीसी कमाण्डर डेवट ने 14 अक्टूबर 1806 को ब्रन्सविक को अबर-स्टेट नामक स्थान पर पराजित किया ।

-फीडलेन्ड का युद्ध-जून 1807:- यद्यपि नेपोलियन ने प्रशिया की सेना को पूर्ण रूप से पराजित कर दिया था, परन्तु वह दृढ़ निश्चय और वीरता के साथ आगे बढ़ता ही चला गया और रूस के प्रदेश में घुस गया । उसका सामना रूस के सम्राट जार से जून, 1807 में फ्रीडलेन्ड नामक स्थान पर हुआ । इस स्थान पर नेपोलियन ने रूस को पराजित किया ।

टिलसिट की सन्धि 1807:- रूस के जार अलेग्जेन्डर प्रथम और नेपोलियन दोनों टिलसिट नामक स्थान पर मिले । उनका मिलन नीमेन नदी के मध्य में एक नाव पर हुआ और सन्धि की शर्तों पर विचार विनिमय हुआ । दोनों व्यक्ति एक दूसरे से बहुत प्रभावित हुए । नेपोलियन ने जार से किसी प्रदेश को उसे देने के लिए नहीं कहा । अपितु उसने जार को तुर्की तथा फिनलेन्ड पर आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित किया । इसके फलस्वरूप रूस और ब्रिटेन के संबंधों में कटुता उत्पन्न हो गई । दूसरी ओर जार ने नेपोलियन के कन्टीनेन्टल सिस्टम को मान्यता प्रदान कर दी ।

इस सन्धि की धाराओं के अनुसार रूस को अपने पोलैंड के प्रदेश को छोड़ना पड़ा और फिर वारसा की ग्रान्ड डची अस्तित्व में आई । इसको नेपोलियन के एक सहायक सेक्सनी के ग्रांड ड्यूक के अधीन रखा गया ।

दूसरे उत्तरी पश्चिमी जर्मनी के प्रदेश में से वेस्ट फोलिया राज्य का निर्माण किया गया। यह कार्य प्रशिया के विघटन के परिणाम स्वरूप हुआ। और हनोवर, ब्रन्सविक तथा हेसे जेरोम बोनापार्ट को सौंपने पड़े।

प्रशिया की सेना में कमी करके उसमें केवल बियालीस हजार सैनिक रहने दिए गए। उस पर अत्यधिक युद्ध जुर्माना लगाया गया और इस धन की प्राप्ति तक फ्रांस की सेना ने प्रशिया पर अपना अधिकार जमाए रखा।

नेपोलियन का साम्राज्य अपनी चरम सीमा पर

टिलसिट की सन्धि ने नेपोलियन को यूरोप का स्वामी बना दिया। उस समय वह अपनी विजयों के चरमोत्कर्ष पर था और समस्त यूरोप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में उसके अधीन था। उसके अधीन कई राज्य थे। आस्ट्रिया और प्रशिया अब एक निम्न कोटि के राज्य हो गए थे। रूस का जार नेपोलियन का प्रशासक ही नहीं वरन् उसका एक दोस्त हो गया था।

इस समय नेपोलियन उसके अधीनस्थ राज्यों के हितों की उपेक्षा करने लगा था और ये प्रदेश उसने अपने सगे संबंधियों को दे दिए थे। उदाहरण के रूप में:- नेपोलियन का ज्येष्ठ भ्राता जोसेफ बोनापार्ट (1). को नेपल्स का राजा बना दिया गया था।

जेराम बोनापार्ट वेस्टफेलिया का राजा बन गया।

नेपोलियन का लघु भ्राता लुई हालैण्ड का राजा बना।

नेपोलियन की बहन एलिस को लुक्का तथा करारा की प्रिन्सेस बनाया गया।

नेपोलियन की छोटी बहन पोलीन, जिसकी शादी प्रिन्स बोर्धीस से हुई थी, वह गौसदल्ला की डचेस बन गई।

जोअचिम, जिसकी शादी नेपोलियन की सबसे छोटी बहन केरोलीन से हुई थी, उसको बर्ग का ग्राण्ड ड्यूक बना दिया गया।

ड्यूजीन बिओहारनेस, जो नेपोलियन का सौतेला लड़का था, उसको इटली का वायसराय बना दिया गया।

राइन महासंघ (Confederation of the Rhine) की स्थापना और होली रोमन साम्राज्य का विनाश-1806

बवेरिया, वरटेम्बर्ग तथा अन्य चौदह जर्मन राजाओं ने जर्मनी के सम्राट के प्रति अपनी अधीनता समाप्त करके नेपोलियन को अपना प्रोटेक्टर (रक्षक) स्वीकार कर लिया। इन राज्यों को "राइन महासंघ" के नाम से जाना जाने लगा। इसके साथ-साथ होली रोमन एम्पायर जिसका अस्तित्व एक हजार वर्ष पूर्व से था उसका कई विनाश हो गया। आस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसीस द्वितीय को होली रोमन एम्परर के पद छोड़ने के लिए बाध्य किया गया और अब उसे केवल फ्रांसीस प्रथम, आस्ट्रिया का परम्परागत सम्राट कहा जाने लगा।

17.4 नेपोलियन का पतन

कन्टीनेन्टल सिस्टम या कन्टीनेन्टल ब्लॉकेड- नेपोलियन की दृष्टि में ब्रिटेन एक व्यापारिक देश था। उसकी समृद्धि और उन्नति का मूल कारण उसके उपनिवेशों से होने वाली आय तथा उसका समुद्री व्यापार था। नेपोलियन ने ठीक ही सोचा कि यदि ब्रिटेन के माल का

यूरोप के देशों में व्यापार करना बन्द कर दिया जाए तो उसकी आर्थिक स्थिति बिगड़ जाएगी । प्रोफेसर सी.डी.हेजन का कथन है कि "निर्माताओं को अपने कारखाने बन्द करने पड़ते । कारखानों में काम करने वाले कर्मचारीगण बेकार हो जाते और उनमें भुखमरी फैल जाती । इस प्रकार कर्मचारी, निर्माता और व्यापारी विनाश के कगार पर पहुँच जाते । ऐसी विषम परिस्थिति में ब्रिटेन की सरकार को समझौता करने के लिए बाध्य होना पड़ता ।"

बर्लिन घोषणा (नवम्बर 1806)

प्रशिया की पराजय के पश्चात् नेपोलियन ने बर्लिन में प्रवेश किया और यहां से उसने अपनी प्रसिद्ध घोषणा प्रसारित की जिसमें कहा गया था कि ब्रिटेन के द्वीप की नाकाबन्दी (Blockade) कर दी जाए और फ्रांस तथा उसके अधीन देशों के बन्दरगाह (Ports) ब्रिटेन के जहाजों (Ships) के लिए बन्द कर दिए जाएं । ये जहाज ब्रिटेन के उपनिवेशों से आते थे । इस प्रकार ब्रिटेन का कोई भी माल यूरोप के बाजार में नहीं बेचा जा सके ।

मिलान घोषणा (दिसम्बर, 1807)

मिलान घोषणा के अनुसार किसी भी देश का कोई जहाज जो ब्रिटेन के बन्दरगाह या ब्रिटेन के अधीनस्थ देशों से आया हो उसको फ्रांसीसी समुद्री जहाजी युद्ध पोत जज कर लें अर्थात् पकड़ लें ।

फ्रान्टेनब्लूब घोषणा- (अक्टूबर, 1810)

इन घोषणाओं के द्वारा नेपोलियन ने ब्रिटेन में निर्मित माल का जव्त करना और नेपोलियन के साम्राज्य में पाए जाने वाले ब्रिटिश निर्मित माल को जलाने का आदेश दिया ।

नेपोलियन ने अपनी समस्त घोषणाओं को, फ्रांसीसी साम्राज्य तथा इटली के प्रदेशों, राइन संघ तथा वारसा की डन्वीमें सख्ती से लागू करने का भरसक प्रयत्न किया ।

सन् 1806 में पोप को उसके प्रदेश के बन्दरगाहों को ब्रिटिश जहाजों के आवागमन के लिए बन्द करने को कहा गया । जब पोप ने नेपोलियन के इस कथन को मानने, में आनाकानी की तो नेपोलियन ने मई 1809 में पोप के राज्य को फ्रान्स के साम्राज्य में सम्मिलित करने का आदेश दे दिया ।

पुर्तगाल ने इस "कन्टीनेन्टल सिस्टम" को मानने से इन्कार कर दिया क्योंकि उसका शराब का व्यापार ब्रिटेन के द्वीपों एवं उसके उपनिवेशों में बहुत व्यापक था, जिससे उसको एक भारी हानि की आशंका थी । प्रिन्स जान में न केवल कन्टीनेन्टल सिस्टम को मानने से ही इन्कार किया वरन् उसने ब्रिटेन से इस संबंध में उसकी सहायता भी मांगी।

नेपोलियन ने पुर्तगाल के विरुद्ध शीघ्र एक्शन लेने का निश्चय किया । इस कार्य हेतु उसके स्पेन से एक सन्धि की जिसमें स्पेन ने फ्रांसीसी जहाजों को पुर्तगाल के विरुद्ध उसके प्रदेश में जाने की अनुमति प्रदान की । इसके साथ-साथ इस बात पर भी सहमति हुई कि पुर्तगाल के भाग करके स्पेन को भी दिया जाए ।

स्पेन के सम्राट चार्ल्स चतुर्थ का सिंहासन से उतारना :- फ्रांसीसी सेना ने जुनोट के नेतृत्व में स्पेन के प्रदेश में होकर पुर्तगाल पर आक्रमण किया और लिस्बन पर अपना अधिकार

स्थापित कर लिया। पुर्तगाली राजपरिवार को अपने देश से भाग कर ब्राजील में शरण लेनी पड़ी। परन्तु फ्रांसीसी सेना स्पेन से नहीं हटी। इस कारण से स्पेनिश नेशलिस्ट ने क्राउन प्रिंस फ्रैडिनेन्ड के नेतृत्व में विद्रोह किया और चार्ल्स चतुर्थ ने अपने युवराज के पक्ष में अपने सिंहासन का त्याग कर दिया। नेपोलियन ने इन दोनों को फ्रांस के प्रदेश में स्थित बेयोन नामक स्थान पर एक कांग्रेस में आने का न्यौता दिया, जिससे उत्तराधिकार की समस्या का समाधान खोजा जा सके। परन्तु नेपोलियन के दबाव डालने पर चार्ल्स चतुर्थ को विवश होकर अपने सिंहासन का त्याग करना पड़ा और फ्रैडिनेन्ड को गिरफ्तार कर लिया गया। नेपोलियन के ज्येष्ठ भ्राता जोसेफ बोनापार्ट को जुलाई 1808 में स्पेन के सिंहासन पर बिठा दिया गया।

स्पेन का विद्रोह और प्रायद्वीप युद्ध (Peninsular War):- इस घटना से स्पेन में नेपोलियन के विरुद्ध एक रोष की भावना जागृत हुई। स्पेन के राष्ट्रीय गुरीलों ने फ्रान्स की सेना को सर्व प्रकार से परेशान करना शुरू किया। उदाहरण के तौर पर- सारागोसा में स्पेन के किसानों के एक दल ने पेलाफोक्स के नेतृत्व में आन्दोलन किया और एक दूसरे स्थान बेलेन में जुलाई 1808 को एक फ्रांसीसी सेना, जिसमें तेईस हजार सैनिक जो जनरल डूपोन्ट के नेतृत्व में थे, उनकी अधीनता स्वीकार करनी पड़ी।

ब्रिटेन का हस्तक्षेप:- ब्रिटेन के विदेश मंत्री (Foreign Minister) जार्ज केनिंग ने नेपोलियन के विरुद्ध स्पेन की सहायता करने का वचन दिया। अपने वचन के अनुसार अगस्त 1808 में सर आर्थर वेलेजली के नेतृत्व में ब्रिटेन ने एक सेना भेजी तथा उसी समय ड्यूक आफ वेलिंगटन का पुर्तगाल में आगमन हुआ और उस समय पुर्तगाल, स्पेन और ब्रिटेन ने सम्मिलित होकर फ्रांस के विरुद्ध कार्य करने का निश्चय किया। इस प्रकार यह प्रायद्वीपीय युद्ध (Peninsular War) का प्रारम्भ हुआ जो 1813 में जाकर समाप्त हुआ।

अगस्त 1808 में वेलेजली ने फ्रांसीसी सेनानायक जुनोट और विमारों को पराजित किया और फ्रांसीसी सेना को स्पेन छोड़ने के लिए बाध्य किया। अक्टूबर 1808 में नेपोलियन ने स्वयं स्पेन पर आक्रमण किया और उसको राष्ट्रीय आन्दोलन को कुचलने में सफलता प्राप्त हुई। परन्तु नेपोलियन को शीघ्र ही स्पेन छोड़ना पड़ा क्योंकि इस समय आस्ट्रिया ने स्वयं को फ्रांस के चंगुल से मुक्त होने का प्रयत्न किया था।

नेपोलियन ने मसीना को 1800 में पुनः पुर्तगाल को विजित करने के लिए नियुक्त किया परन्तु उसकी योजना को वेलेजली की तृतीय रक्षा प्रणाली ने विफल कर दिया। इस तृतीय रक्षा प्रणाली को "लाइन आफ टोरेस वेडरास" भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त फ्रांस को फ्यूएनटेस डी ओनोरो और अलबुरा में सन् 1801 में पराजय का मुंह देखना पड़ा।

सन् 1812 में नेपोलियन का रूस पर आक्रमण प्रायद्वीप युद्ध में एक टर्निंग प्वाइंट सिद्ध हुआ। रूस के विरुद्ध युद्ध करने हेतु सेना की एक बड़ी टुकड़ी को स्पेन से हटाना पड़ा। जिससे वह रूस से होने वाले युद्ध में भाग ले सके। नेपोलियन के इस कार्य से ब्रिटेन के जनरल लार्ड विलिंगटन को विशेष सहयोग प्राप्त हुआ।

17.5 नेपोलियन के साम्राज्य का विनाश:

चतुर्थ गुट

इसी समय ब्रिटेन ने चतुर्थ गुट की रचना नेपोलियन के विरुद्ध की। इस गुट में रूस और प्रशिया भी सम्मिलित हुए।

नेपोलियन की उस और प्रशिया पर विजय

यह सत्य है कि नेपोलियन के रूस पर आक्रमण करने से उसकी सैन्य शक्ति में कुछ शिथिलता अवश्य आई थी परन्तु फिर भी अपने शत्रुओं के लिए वह बहुत शक्तिशाली था। जनवरी 1813 में कलीचे की सन्धि के अनुसार रूस और प्रशिया में एकता हो गई थी और उन दोनों ने यह निश्चय किया था कि वे पृथक रूप से कोई सन्धि नहीं करेंगे और जार ने यह वचन दिया कि प्रशिया अपने खोए हुए प्रदेशों को पुनः प्राप्त करे और जर्मनी स्वतंत्र रूप से रहेगा और उन दोनों ने संयुक्त रूप से नेपोलियन से युद्ध करने का निश्चय किया। नेपोलियन ने अपनी योग्यता एवं वीरता का पूर्ण परिचय दिया और उसने उन देशों की संयुक्त सेना को 2 मई को लटजेन तथा 20-21 मई 1813 को बाट जेन नामक स्थानों पर पराजित किया।

आस्ट्रिया का नेपोलियन के प्रति दृष्टिकोण

आस्ट्रिया को एक ओर तो रूस की बढ़ती हुई शक्ति से ईर्ष्या थी तथा दूसरी ओर-वह नेपोलियन से भयभीत था। इसी कारण से वह नेपोलियन से संधि करना चाहता था। इस उद्देश्य हेतु आस्ट्रिया के चान्सलर मेटरनिख ने निम्नलिखित सुझाव पेश किए:-

उसने यह प्रस्ताव रखा कि जो प्रदेश प्रशिया ने 1807 में खो दिए हैं, वे प्रदेश उसको वापस दे दिए जाएं।

पोलैण्ड का रूस, आस्ट्रिया तथा प्रशिया के बीच बटवारा हो जाए।

राइन संघ राज्य को समाप्त कर दिया जाए और जर्मनी के बंदरगाह जैसे हमबर्ग तथा लुबेक को मुक्त कर दिया जाए।

नेपोलियन ने इन प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया और आस्ट्रिया 12 अगस्त 1813 को चतुर्थ गुट में सम्मिलित हो गया। इसका प्रतिशोध लेने हेतु नेपोलियन ने आस्ट्रिया पर आक्रमण कर दिया और उसने अपनी अंतिम विजय ड्रेसडन नामक स्थान पर प्राप्त की।

लिपजिग का युद्ध या राष्ट्रों का युद्ध- 1813

सम्मिलित गुटीय देशों ने एक साथ नेपोलियन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और लिपजिग के युद्ध में नेपोलियन को पराजय का मुंह देखना पड़ा। इस युद्ध को राष्ट्रों का युद्ध या बेटल आफ नेशन्स भी कहते हैं। यह युद्ध तीन दिन तक 16 से 19 अक्टूबर, 1813 तक खेला गया। इस युद्ध में संयुक्त देशों की सेना में तीन लाख तथा नेपोलियन की सेना में दो लाख सैनिक थे।

नेपोलियन युद्ध क्षेत्र से फ्रांस भाग गया परन्तु उसकी पराजय से उसका विशाल साम्राज्य ताश के पत्तों की तरह छिन्न-भिन्न हो गया। राइन संघ राज्य तथा वेस्टफ्रेलिया का राज्य समाप्त हो गया तथा हालैंड, डेनमार्क तथा इटली प्रदेशों में क्रांति का प्रारंभ हो गया।

संधि का प्रस्ताव 1813

इतना सब कुछ होने पर भी संयुक्त देशों में आस्ट्रिया के प्रभाव में आकर नेपोलियन से एक उचित एवं अच्छे सुझावों की एक सन्धि करने का प्रस्ताव किया । इस प्रस्ताव में कहा गया कि नेपोलियन जर्मनी, इटली, हालैंड तथा स्पेन की स्वतंत्रता को मान्यता दे और उनको स्वतंत्रता दे तथा फ्रांस की सीमा केवल राइन, आल्प्स और पायरेनीज तक सीमित रहे ।

नेपोलियन ने इन प्रस्तावों को मानने से इन्कार कर दिया । के अलबे के अनुसार नेपोलियन ने मेटर्निस से ये शब्द कहे:- "मैं मृत्यु का आलंगन करने को तत्पर हूँ परन्तु एक हाथ भर भूमि भी छोड़ने को तैयार नहीं हूँ । तुम्हारे सम्राट बीस बार भी पराजित होने पर पुनः अपने महलों में चले जाते हैं । परन्तु मैं एक भाग्यशील व्यक्ति हूँ । मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

संयुक्त देशों का फ्रांस पर आक्रमण 1814 चौमोन्ट की सन्धि

1 मार्च 1814 को रूस, आस्ट्रिया और प्रशिया ने चौमोन्ट की सन्धि पर हस्ताक्षर किए और यह निश्चय किया कि वे व्यक्तिगत रूप से नेपोलियन से किसी प्रकार की सन्धि नहीं करेंगे, युद्ध करने से पीछे नहीं हटेंगे जब तक कि उनके शत्रु को पूर्णरूप से पराजित नहीं कर दिया जाए और प्रत्येक संयुक्त देश में एक लाख पचास हजार सैनिक देने पर सहमति व्यक्त की और ब्रिटेन ने पांच मिलियन पौंड की एक विशेष अनुग्रह राशि देने की घोषणा की ।

नेपोलियन चारों ओर से अपने शत्रुओं से घिर गया । ब्लूचर जर्मनी सेना के साथ राइन की ओर से आगे बढ़ रहा था । शारजेनबर्ग ने आस्ट्रिया की सेना के साथ राइन नदी पार कर ली थी और वह बसेल के दक्षिण की ओर बढ़ रहा था । बरनाडोटे, जो स्वेडन का उत्तराधिकारी राजकुमार था फ्रांस के उत्तर पूर्व की ओर बढ़ रहा था । वेलिंगटन ने स्पेन में फ्रांस की सेना के ऊपर एक अभूतपूर्व एवं निर्णायक विजय प्राप्त कर ली थी ।

अचानक नेपोलियन ने मारने के युद्ध में ब्लूचर को पराजित कर दिया । परन्तु अभाग्यवश संयुक्त देशों की सेना ने उस पर भीषण दबाव डाला । सीनेट ने उसको उनके पद से पदच्युत कर दिया और उसको इस पद को छोड़ना पड़ा । पैरिस को 31 मार्च, 1814 को हस्तगत कर लिया गया ।

फोन्टेनब्लू की संधि- 1814

अंत में नेपोलियन को 6 अप्रैल 1814 को संयुक्त देशों के साथ एक सन्धि पर हस्ताक्षर करने पड़े । यह संधि फोन्टेन की संधि के नाम से प्रसिद्ध हुई । नेपोलियन को फ्रांस की राजगद्दी पर उसके तथा उसके उत्तराधिकारियों के अधिकार को छोड़ना पड़ेगा । दूसरे उसे फ्रांस छोड़कर ऐल्बा के टापू पर जाना पड़ेगा । वहां पर वह एक सम्राट की भांति जीवन व्यतीत करेगा और उसे प्रति वर्ष दो मिलियन फ्रेंक्स पेन्शन स्वरूप मिलेंगे । उसके परिवार को एक अन्य पेन्शन राशि ढाई मिलियन फ्रेंक्स की मिला करेगी तथा मेरी लुईस को परमा की डची प्राप्त होगी ।

नेपोलियन ऐल्बा द्वीप में चला गया और फ्रांस में उसके वास्तविक शासक सम्राट लुई सोलहवें के भाई लुई अठारहवें को उसके पैतृक सिंहासन पर विराजमान किया गया ।

नेपोलियन की ऐल्बा से वापसी

26 फरवरी, 1815 को नेपोलियन अपने सात सौ साथियों सहित आश्चर्य जनक रूप से ऐल्बा टापू से भाग निकला और उसने 20 मार्च को पैरिस में प्रवेश किया । फ्रांस की जनता ने

उसका बड़े जोश के साथ स्वागत किया और पुनः उसे अपना सम्राट स्वीकार किया और हजारों सैनिक उसकी सहायता हेतु उसके पास इकट्ठे हो गए । उसने उस समय यह घोषणा की कि वह फ्रांस की जनता को विनाश से बचाने हेतु पुनः फ्रांस आया है, जिससे शत्रुओं को उनसे बदला लेने का अवसर न मिले और वह पुनः फ्रांस की जनता के अधिकारों, स्वतंत्रता तथा समानता की रक्षा कर सके ।

वाटरलू का युद्ध- 1815

नेपोलियन के भागने का समाचार बियना पहुंच गया, जहां पर कि विजयी देशों के समस्त राजनीतिज्ञ यूरोप में किस प्रकार शान्ति स्थापित की जाए तथा किस प्रकार पुरानी राज्य सीमाएं निर्धारित की जाएं, किसको वास्तविक उत्तराधिकारी माना जाए और किस प्रकार युद्ध के खर्च का भुगतान निश्चित किया जाए, इन समस्त समस्याओं का समाधान खोजने के लिए एकत्र हुए थे । समस्त संयुक्त देशों ने शीघ्र ही अपनी पुरानी संधियों को पुनः सुनिश्चित किया तथा इन्होंने न केवल नेपोलियन बोनापार्ट को पुनः पदच्युत किया परन्तु इसके साथ-साथ अपनी समस्त सेनाएं लेकर फ्रांस की ओर बढ़े । वेलिंगटन ने लगभग एक लाख ब्रिटिश, डच तथा जर्मन सैनिक इकट्ठे किए और ऐसी योजना बनाई कि उसकी सहायता के लिए प्रशिया के सैनिक कमान्डर ब्लूचर एक लाख सोलह हजार प्रशिया के सैनिकों के साथ उससे ब्रूसेल्स के निकट आकर मिले (वाटरलू नायक स्थल ब्रूसेल्स के दक्षिण में लगभग बारह मील की दूरी पर स्थित है) शारजेनबर्ग के नेतृत्व में आस्ट्रिया की सेना राइन के निकट पहुंच गई । नेपोलियन मुश्किल से लगभग एक सौ दिन ही पैरिस में रहा और इसके पश्चात् अपने एक लाख अस्सी हजार सैनिकों को लेकर 12 जून 1815 को संयुक्त देशों की संयुक्त सेना से मुकाबला करने के लिए चल दिया । भाग्यवश नेपोलियन को 18 जून को वाटरलू के स्थान पर वेलिंगटन और ब्लूचर की सम्मिलित सेना के हाथों पूर्ण पराजय प्राप्त हुई । 21 जून को नेपोलियन पैरिस पहुंचा और उसने पुनः फ्रांस का सिंहासन अपने पुत्र के पक्ष में खाली कर दिया और उसने फ्रांस से भाग कर अमेरिका जाने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु वह अपने इस कार्य में असफल रहा विवश होकर ब्रिटेन के नौसैनिक जहाजी बेड़े के केप्टन मेटलेन्ड के समक्ष आत्म समर्पण कर दिया और उसे सेन्ट हेलेना में निर्वासित कर दिया गया, जहां पर 5 मई 1821 को उसकी मृत्यु हो गई ।

17.6 नेपोलियन की भूलें

नेपोलियन ने कुछ बड़ी भूलें कीं । उनका विवरण इस प्रकार है:-

नेपोलियन द्वारा प्रतिपादित "कन्टीनेन्टल सिस्टम", जिसके द्वारा ब्रिटेन की आर्थिक परिस्थिति को बिगाड़ना था, उसके लिए सबसे बड़ी भूल सिद्ध हुई । इसके परिणाम स्वरूप व्यापार में गतिरोध उत्पन्न हुआ तथा आवश्यक वस्तुओं के दाम बहुत बढ़ गए । उसने अपने इस सिद्धान्त को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए शक्ति का सहारा लिया । इसके परिणाम स्वरूप वह अधिक कठोर हो गया । इससे उसके अनेक शत्रु बन गए । नेपोलियन का कूटनीति से स्पेन के राजसिंहासन पर अधिकार करना, उसका पुर्तगाल पर आक्रमण, उसके पोप के साथ

तथा रूस के साथ विचारों में भिन्नता, ये समस्त उसके कन्टीनेन्टल सिस्टम को सुचारु रूप से लागू करने के प्रयत्न स्वरूप उत्पन्न हुए थे ।

प्रायद्वीप युद्ध (Peninsular War) भी नेपोलियन के लिए अत्यंत हानिकारक सिद्ध हुआ । स्पेन पर उसका प्रभुत्व स्थापित करने की समस्त चेष्टाएं व्यर्थ होने में उस समय की युद्ध पद्धति, स्पेन वासियों की गुरिल्ला युद्ध प्रणाली तथा ब्रिटेन का एक महत्वपूर्ण सामुद्रिक शक्ति होना, ने महत्वपूर्ण योगदान दिया । वास्तव में स्पेन के फ्रांज़े ने नेपोलियन की शक्ति का ह्रास करके उसको पतन की ओर अग्रसर किया ।

इसी प्रकार नेपोलियन की अवनति का दूसरा मुख्य कारण उसका रूस पर आक्रमण करना था । वह विजय पाने की आकांक्षा में मास्को तक पहुंच गया, जो इसकी एक बहुत बड़ी भूल थी ।

नेपोलियन ने बगैर किसी प्रदेश के निवासियों की विचाराधारा का ख्याल करते हुए अनेक अधीन राज्यों को जन्म दिया । इन राज्यों में उसने अपने रंग संबंधियों को शासक के पद पर रखा । इस परिवर्तन से जनता के हृदय में घृणा की लहर ने जन्म लिया ।

इस प्रकार सबसे मुख्य एवं महत्वपूर्ण शिक्षा जो नेपोलियन ने प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से योरोपवासियों को दी वह थी राष्ट्रवादिता या राष्ट्रीयता (Nationalism)

जर्मनी- जर्मनी में नेपोलियन के हस्तक्षेप के कारण वहां के निवासियों एवं राज्य परिवार में नेपोलियन के प्रति एक क्रोध की लहर फैल गई । नेपोलियन ने आस्ट्रिया और प्रशिया में शक्ति संतुलन स्थापित करने हेतु कई छोटे राज्य जर्मनी, बेवेरिया, बरटम बर्ग तथा बडेन स्थापित किए । उसने रोमन साम्राज्य को भी नष्ट कर दिया और इस प्रकार उसने 1805 में 360 राज्यों के स्थान पर केवल 80 राज्य रहने दिए ।

इटली:- आस्ट्रियन चान्सलर मेटरनिख के कथानुसार इटली केवल एक भौगोलिक नाम था । परन्तु नेपोलियन ने यहां पर राष्ट्रीय चेतना जागृत की । नेपोलियन वह प्रथम शासक था जिसने इटली को एक सूत्र में बांध कर उसे राष्ट्र की संज्ञा प्रदान की और उसने स्वयं को रोम का सम्राट घोषित किया ।

पोलैंड- जब पोलैंड का विभाजन हुआ और उसका बटवारा बड़े देशों जैसे रूस, प्रशिया एवं आस्ट्रिया के बीच में हुआ, उस समय प्रत्येक देश ने पोलैंड के अस्तित्व को समाप्त करने का प्रयत्न किया । उस समय केवल नेपोलियन ही वह व्यक्ति था जिसने पोलैंड के एक भाग को "ग्रान्ड डची आफ वारसा" में परिणित किया । इस प्रकार उसने पोलैंड वासियों की सहायता करके उनके प्रथक अस्तित्व को बनाए रखा तथा उनमें राष्ट्रीयता की भावना को जागृत किया ।

आटोमन एम्पायर- सन् 1798 में नेपोलियन ने मिस्र (Egypt) पर आक्रमण किया । इस आक्रमण का मुख्य ध्येय बिट्रेन के भारत से होने वाले व्यापार में गतिरोध उत्पन्न करना था । इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उसने जार एलेग्जेन्डर प्रथम को तुर्की पर आक्रमण करने हेतु प्रोत्साहित किया । ग्रीस को स्वतंत्रता प्राप्ति भी केवल आटोमन एम्पायर में निरन्तर उपद्रव उत्पन्न करके ही हो सकती थी ।

विज्ञान- उस समय नेपोलियन ही एक मात्र ऐसा व्यक्ति था जिसने विज्ञान की खोजों को समाज के लिए अत्यन्त हितकर मानकर उसकी प्रशंसा की थी। सन् 1799 और 1814 के मध्य में लेपलेस ने अपने ग्रंथ "मेकेनिक सेलेस्टी" के प्रथम चार भागों में कई पुरानी प्रचलित मान्यताओं को समाप्त करके न्यूटन के ग्रविटेशन (आकर्षण) के सिद्धान्त की उचित व्याख्या की थी तथा सौर्य पद्धति (Solar System) को भी पूर्ण रूप से उजागर किया था। एक नई स्थापित संस्था "इकोल पोलीटेक्नीक" के अध्यक्ष पद पर विराजमान मोन्गे ने ज्योमेट्री विज्ञान का आविष्कार करके गणित में ग्राफीय पद्धति को जन्म दिया।

17.7 उपसंहार

इतिहासकारों ने नेपोलियन की अचानक उन्नति तथा उसके एक शक्तिशाली शासक बनने के अनेक कारण बताए हैं। उनके विचार में यह उस समय की एक आवश्यकता थी। जिसको फ्रांस में हुई राज्यक्रांति तथा उस समय व्याप्त अव्यवस्था ने जन्म दिया था।

यहां यह कहना उचित नहीं होगा कि नेपोलियन की उन्नति का कारण उसकी Dictatorial भावना स्वरूप हुई और जनमत के विरोध के बावजूद भी वह शासक बना। क्योंकि उस समय की जनता प्रजातंत्र की मांग कर रही थी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि महान व्यक्ति सदैव जनता जर्नादन के सहयोग के फलस्वरूप ही उस स्थान तक पहुंच सके हैं। इसी प्रकार नेपोलियन भी जनता के सहयोग के कारण ही इतनी उन्नति कर सका। उस समय जनता ने यह उचित समझा कि नेपोलियन ही एक ऐसा व्यक्ति है जो उनको प्रजातंत्र की दयाइयंत्रकारी शक्तियों से अपनी अपार शक्ति द्वारा उनकी रक्षा कर सकता है।

किसी भी नेता के लिए केवल जनता की सहायता ही पर्याप्त नहीं होती। उस नेता में स्वयं में भी ऐसे गुण होने चाहिए जो उस पद की गरिमा को बनाए रखें। नेपोलियन के विषय में यह निर्विवाद सत्य है कि वह अपने गुणों, आकांक्षाओं एवं अपरिचित क्षमता के फलस्वरूप ही इतनी उन्नति कर सका। उसका अद्वितीय साहस, अपूतपूर्व नेतृत्व, जनता को प्रसन्न रखने की क्षमता, समस्त कठिनाइयों का साहसपूर्वक सामना करना तथा अपने देश की आवश्यकताओं की यथाशक्ति पूर्ति करने के फलस्वरूप ही वह उन्नति कर इतने महत्वपूर्ण स्थान को प्राप्त कर सका।

17.8 अभ्यासार्थ प्रश्न:

- 1- नेपोलियन के व्यवस्था संबंधी सुधारों (Institutional Reforms) की व्याख्या कीजिए? उनसे किस प्रकार उसकी अद्वितीय योग्यता का आभास होता है ?
- 2- नेपोलियन बोनापार्ट के प्रथम कोन्सल के रूप में किए गए कार्यों पर प्रकाश डालिए ?
- 3- नेपोलियन के "कन्टीनेन्टल सिस्टम" की व्याख्या कीजिए ? इस सिस्टम का उसके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा ?
- 4- "कन्टीनेन्टल सिस्टम" किसे कहते हैं? नेपोलियन ने किस प्रकार इसको लागू किया ?
- 5- फ्रांस और रूस की संधि की असफलता के कारण बताइये ?

6- नेपोलियन की अवनति के कारण बताइये ?

निम्नलिखित विषयों पर टिप्पणी (Short Notes) लिखिए:-

- (i) कोन्सुलर कन्सटीट्यूशन (कोन्सुलर संविधान)
- (ii) कनकोरडेट
- (iii) कोड आफ नेपोलियन
- (iv) 1807 में हुई टिलसिट की सन्धि
- (v) प्रायद्वीय युद्ध (Peninsular War)
- (vi) कन्टीनेन्टल सिस्टम या अवरोध (Blocked)
- (vii) 1814 में हुई फ्रॉन्टेन ब्लू की सन्धि

संदर्भ ग्रंथ

- 1- एबट, जोसेफ. एस.सी.- दी लाइफ आफ नेपोलियन बोनापार्ट (देहली, 1972)
- 2- फिशर, एच. ए. एल- बोनापार्टज्म (आक्सफोर्ड 1914)
- 3- टी. थोम्पसन, जे. एम.- नेपोलियन बोनापार्ट हिज राइज एन्ड फाल
- 4- मरखम, एफ. एम. एच- नेपोलियन एण्ड अवेकनिंग आफ यूरोप (1954)
- 5- डोज, टी.ए. - दी बिगनिंग आफ दई फ्रेन्च रिवोल्यूशन टू दी बेटल आफ वाटरलू- 4 भाग (1904-7)
- 6- थोमसन, डेविड - यूरोप सिन्स नेपोलियन (लंदन 1961)
- 7- ग्रान्ट, ए जे और टेम्परले, एच.- योरूप इन दी नाइनटीन्थ एण्ड ट्वन्टीएथ सैन्चुरीज 1789-1950 (लन्दन 1961).
- 8- हेजन सी. जे. एच. - ए पोलिटिकल एण्ड कल्चरल हिस्ट्री आफ माडर्न यूरोप-, .वोल. I, 1500-1830 (न्यूयार्क 1947)
- 9- हेजन, सी.डी. - माडर्न यूरोप अप टू 1945 (देहली 1968)
- 10- केटलबी, सी.डी.एम- ए हिस्ट्री आफ माडर्न टाइम्स फ्रांस 1789 टू प्रेजेन्ट डे (लन्दन 1948)
- 11- बारलेन, एम. ई. - दी फाउन्डेशन्स आफ माडर्न यूरोप- 1789-1871 (लंदन 1968).
- 12- कोलिन्स, इरीन - दी एज आफ प्रोग्रेस, ए सर्वे आफ योरों- पिअन हिस्ट्री फ्राम 1789-1870 (लंदन 1964).

MAHI-01/ISBN13/978-81-8496-260-4